सनसनीदार मामले

—:o :o::o:—

वेश्या की पति-भक्ति

अपनी जान देकर भी सुन्दरी वेश्या ने अपने माने हुए पति के प्राणों की, पद-मर्यादा को, उसके भविष्य-जीवन की रक्षा करने की चेष्टा की। मामला बड़ा सनसनीदार साबित हुआ। अदालत चक्कर में थी। बड़े-बड़े महामहिम आश्चर्य-चकित थे। मामले ने कई बार पलटा खाया, उसने कई रंग बदले, कई बार कार्रवाइयाँ की गईं। और अन्त में बड़ी कठिनाई, खासी दौड़-धूप, मुस्तैदी से की गई तफतीश के बाद असली मामले का पता चला। किन्तु उस समय, जब अपराध करने वाले को सजा देना अदालत की शक्ति में न रहा गया था।

मेनका उसका [illegible] था। विश्वामित्र ऐसे घोर तप करने वाले महा-महा-ऋषि को मोहित कर शकुन्तला ऐसी विश्व-विख्यात सुन्दरी कन्या को उसने भले ही जन्म न दिया हो, पर अपने अनुपम सौन्दर्य एवं अनूठे, मादक हाव-भाव से उसने ऋषि-तुल्य एक तपस्वी महारथी को आकर्षित कर उसने अपना क्रीत-दास जरूर बना लिया था। उस समय मेनका की उठती जवानी और निखरते सुनहले रंग, उभरते-गदराते बरजोर अंगों की

लुनाई-सुघराई की बड़ी धूम थी। राज्य भर के छोटे-बड़े सभी की जबान पर उसकी चर्चा थी, सभी की नजरें उसी की झाँकी के लिए तड़पतीं-बहकतीं बिछी रहती थीं। राज्य की सब से सुन्दरी नर्तकी होने के कारण हर त्योहार-उत्सव-जलसे में उसके नाच-गाने का खास सरकारी इंतिजाम तो जरूर रहता ही राज्य के छोटे-बड़े सरदार, दरबारी, ओहदेदार, महाजन, साहूकार, ठेकेदार, हाकिम-हुक्काम के यहाँ होने वाली मजलिसों मे भी सब से पहले मेनका की ही पूछ होती, उसी का डेरा शौक से बुलाया जाता। मेनका के रग-रूप का जादू छाया हुआ था। उसकी सुरीली तान की मोहनी व्यापी हुई थी। उसकी चचल चितवन का मादक असर फैला हुआ था। उसके नाच की धूम थी। उसके गाने की समाँ बँधी हुई थी। उसका रग था। उसी की चाँदी थी। राज-दरबार मे उसका आदर-मान था। हाकिमो-अफसरो के बीच मेनका की तूती बोलती थी। सेठ-साहूकारों में उसका बोलबाला था। पैसे वाले नौजवान पर उसका जादू था। अपनी हमपेशा नर्तकियों पर उसका रोबदाब फैला था। वे मेनका को कोसतीं, उसके उरूज से वे जलीं जाती। पर कर कुछ न सकती थीं।

मेनका जितनी ही सुन्दरी थी, गला भी उसका उतना ही मीठा, वैसा ही अधिक सुरीला एव लोचदार था। जब आलाप लेती तो कोयल की कूक को मात दे देती। गुन सीखने और अधिक-से-अधिक मेहनत कर राग-रागनियो को सा [illegible] की उसे गहरी लगन थी। नृत्य-कला में पारंगत होने के लिए उसने अपने शरीर को, अंग-अंग को अभ्यास के कठिन शिकजे में कड़ाई से कसा था। घंटों पैरों को थकाया [illegible] दिनों एक-एक भाव को ठीक से प्रदर्शित करने में लगा[illegible] था। बड़े-से-बड़े गायनाचार्य उसके अभ्यास के आ[illegible] बोल चुके थे। प्रसिद्ध

नृत्यकला विशारद उसके नाचने के मजक के सामने कान-पकड़ हाथ लगा चुके थे। मशहूर उस्ताद उसके बोलों-लहजों-आलापों के सामने सिरजंदा कर चुके थे।

ऐसी थी वह कलयुगी मेनका जो कृष्णजन्माष्टमी के अवसर पर राज्य के सब से बड़े मंदिर में नृत्य-गान द्वारा जन्मोत्सव के समारोह को सौ-सौ गुना बढ़ाते हुए ऋषि-तुल्य पेशकार साहब की समदर्शी अनुभवपूर्ण आँखों के सामने आई और किरकिरी की तरह उनके मानस-नेत्रों में बरबस पैठ गई। अवसर के अनुकूल ही मेनका ने अपने सहज सुन्दर सलोने शरीर को दिव्य-बहुमूल्य चुने हुए वस्त्राभूषणों से रुच-रुच कर सजाया-सँवारा बनाया-निखारा था। आज उसके मादक आकर्षण का कहना ही क्या! फिर वह अपनी सारी कला खर्च कर भगवान को अपने नृत्य-गान से संतुष्ट-प्रसन्न भी तो करना चाहती थी। भगवान को मूर्ति के सामने होने वाले नृत्य-गान में राज-गुरु-महंत, सरदार-सामन्त, अफसर-ओहदेदार, दरबारी-पवाईदार सभी तो स्वच्छंदता से सम्मिलित थे। उनका भी ध्यान मेनका को अवश्य रखना पड़ता था। उसके लिये 'एक पंथ, दो काज' थे, भगवान को भी भक्ति-भाव से संतुष्ट करना और अधिकारियों-आश्रयदाताओं को भी खुश कर लेना। और ऐसे अवसरों पर दिखलाये गये कमाल से उसके नाच-गाने की दुनिया में शोहरत जो अपने-आप हो जाती, वह घेलवे मे। इन्हीं सब कारणों से मेनका आज जितना भी हो सकता था, बनठन कर अखाड़े में उठरी थी और जो भी उसमें गुन था उसका पूरा-पूरा प्रदर्शन वह कर दिखाना चाहती थी। और ऐसे ही बेजोड़ मौके पर पेशकार साहब के कानों मे पड़ी मेनका के कम्बु-कण्ठ से निकली हुई मनोमुग्धकारी यह तान :—

'जो मैं प्रभुहि न अस्त्र गहाऊँ, तो मैं शान्तनु सुत न कहाऊँ।'

यह वंशी-सी मधुर-तम ध्वनि पेशकार साहब के कानों में आई और सीधे हृदय मे जाकर हिलोरें उठाने लगी। तान के तीर की तीखी चोट से वे तिलमिला उठे। जेब में हाथ डाले चुपचाप रुद्राक्ष की सुबुक-हल्की माला के नन्हें गुरियों को अंगुलियों द्वारा हौले-हौले सटकाना और मन-ही-मन चलने वाला 'शिवोऽहम्' का अजपा-जाप पेशकार साहब को एकाएक भूल-सा गया। उनका हाथ अनायास जेब से बाहर आगया, उनका मन 'शिवोऽहम्' से उचट कर 'किसकी ऐसी मीठी तान है' की तलाश में मतवाला हो उलझ उठा। मन-हर तान के सुकुमार-सुबुक-सुरम्य सूत्र के सहारे अतरंग-दर्शी शान्त-सुस्थिर नेत्र अपने-आप बहिर्मुख हो उठे और इस मधुर-मन-मथ बंधन के मूल कारण की खोज-परख में व्यस्त-विकल हो गये। और कर्ण-कुहरों मे सुधा प्रवाहित करने वाली मनोन्मादक तान के मुख्य उद्गम स्थान पर दृष्टि पड़ी तब तो पेशकार साहब के नेत्रों में एक प्रकार से चकाचौंध छा गई, उनके मन-मस्तिष्क मे बिजली-सी दौड़ गई। उनकी आत्मा विभोर हो उठी। शिव-समाधि का रूपक खड़ा कर वे तन-मन-जीवन-प्राण से एकाग्र हो उस अलौकिक दिव्य रूप-छटा का ध्यान-सा करने लगे। मैनका की सुरीली स्वर लहरी ने उन्हे अपनी ओर बरबस अनचीते मे खींचा था। मेनका के अप्सरोपम रूप-लावण्य ने उनके नेत्रों को, उनके मन को, उनके प्राणों को, उनकी आत्मा को मुग्ध कर लिया। माला के गुरिये जहाँ-के-तहाँ पड़े रह गये। 'शिवोऽहम्' का अजपाजाप अपने-आप विस्मरण हो गया। नेत्र मेनका के सलाने मुख पर जाकर गड़ गये। उनका मन मेनका के हाव-भाव में जाकर अटक गया। उनके प्राण मेनका के लिए व्याकुल हो उठे। दीन-दुनिया को भुला कर पेशकार साहब सर्वतोभावेन एकमात्र मेनका के वशीभूत हो गये। उस समय ससार में केवल दो बातें जीवित-जागृत

जान पड़ती थीं; एक तो थी मेनका के कण्ठ से निकली हुई मादक-सुरीली तान, और दूसरी थी उसके हाव-भाव प्रदर्शन करने वाले सलोने-सुगढ़ अंगों की सौन्दर्य-राशि। पेशकार साहब की केवल दो इन्द्रियाँ उस समय सजग-सक्रिय थीं। कान तान सुन रहे थे, नेत्र रूप-सुधा का पान कर रहे थे। और सब शून्य था। सारा विश्व-ब्रह्माण्ड उसी में लय को प्राप्त हो चुका था। उस अवसर पर कृष्णजन्मोत्सव के कारण यदि किसी को सदेह स्वर्ग-सुख की उपलब्धि हो सकी थी, तो वह केवल पेशकार साहब को ही। वे ही अनहद-नाद में अह्लादित-आमज्जित थे। अकेले वे ही रूप-सागर में स-शरीर सराबोर थे। उनके प्राण किलोले कर रहे थे। उनकी आत्मा परम निर्वाण के आनन्द का कुंठा-भाव-रहित उपभोग कर रही थी।

ससार अपने-अपने राग में मस्त था। किसी को किसी दूसरे की क्या पड़ी थी! फिर पेशकार साहब थे मशहूर त्यागी, प्रसिद्ध शिव-भक्त तपस्वी, ससार मे—गृहस्थी मे रह कर भी राग-भोग से रहित, एकदम विदेह, जल में कमल-दल की भाँति निर्लेप। फिर भला उनकी ओर ध्यान देने का साहस भी किसको होता। वे तो राज-दरबार की रीति-नीति के ऊपरी ढोंग का निर्वाह भर करने के लिए मजबूरी हालत मे ऐसे जलसो मे शामिल होने की रस्म अदा कर देते हैं।

किन्तु मेनका की सुशिक्षित तेज आँखो से असली बात छिपी न रह सकी। वह पेशेवाली जो थी।

जन्मोत्सव समाप्त हुआ। पर पेशकार साहब के लिए एक नये उत्सव का जन्म देने के बाद ही। उस रात के बाद जब दूसरे दिन वे शिव जी की पूजा करने बैठे, तब उन्हें अपने आराध्य इष्टदेव की प्रतिमा मेनका की रूप-आकृति में ही भासित हुई। यही क्यों! जब ब्रह्म-मुहूर्त में नित्य के अभ्यासवश उनकी

आँखें खुलीं और नियमानुकूल उन्होंने अपने गुरुदेव तथा इष्ट-देव का ध्यान-स्मरण किया, तब उनकी बाह्य तथा मानसिक दृष्टि के सामने बरबस जो ज्योतिर्मय दिव्य छटा लक्षित हुई, वह थी मेनका के प्रकाशपूर्ण, उज्ज्वल श्वेत-श्याम-रतनारे-अनियारे-आकर्ण विस्तीर्ण-सर्वसौंदर्यपूर्ण, परम सुखकर, सर्वव्यापी नयनों की ही। पेशकार साहब ने अपनी दीर्घकाल-व्यापिनी साधना की संचित शक्ति को उद्भूत कर लाख चेष्टा की उन सर्वशक्ति समन्वित चचल, चोखे नयनों से पीछा छुड़ा कर अपने जगत-कल्याणकर गुरुदेव, इष्टदेव के मानसिक ध्यान-पूजन-आराधना-अभिषेक की, किन्तु मेनका के सर्व-विजयी नयनों ने उनके गुरु-देव, इष्टदेव को उनके मन, बुद्धि, प्राण-आत्मा, मास्तिष्क, स्मृति, कल्पना से ऐसा तिरोहित-निर्वासित कर दिया था कि हजार बार चेष्टा करने पर भी पेशकार साहब न तो इष्टदेव का ही ध्यान-दर्शन कर सके और न अज्ञानान्धकार को दूर करने वाले अपने सिद्ध गुरुदेव के चरणकमलों मे प्रतिष्ठित सहस्र-सूर्य प्रभावपूर्ण नख-प्रभा की एक भी ज्ञानदायिनी किरण के आभास मात्र को पा सके। उनके मन, मास्तिष्क, प्राण, आत्मा में तो मेनका के के सर्वाच्छन्नकारी, सर्व प्रबल रसीले दामिनि द्युतिपूर्ण नयन ही सर्व तो भावेन इस प्रकार बस-धंस गये थे कि गुरुदेव इष्टदेव को वहाँ ठहरने या उदित होने की गुंजाइश ही न रह गई थी। विवश हो उन्होंने ब्रह्म-मुहूर्त में गुरुदेव, इष्टदेव के स्थान पर मेनका के सर्व-जयी नयनों का ध्यान-पूजन कर प्रातः कृत्य प्रारम्भ किया। नदी मे स्नान करते समय डुबकी लगाने पर जल के अन्दर भी उन्हे मेनका की मुस्कुराती-इठलाती मूर्ति मिली। धार के ऊपर सर निकालते पर जल-राशि पर उन्हें मेनका नाचती-थिरकती-सी देख पड़ी। आकाश की ओर जो नजर फेरी तो सुनील गगन मे एक-एक कर लुप्त होते हुए लुप-

लुपाने वाले तारागण में मेनका के आकर्षक उत्फुल्ल आनन के दर्शन हुए। रज के कण-कण में उन्हें मेनका आभास-विभासित होती देख पड़ी। मानो विश्व-ब्रह्माण्ड उस काल पेशकार साहब के निमित्त मेनका-मय हो उठा हो।

पेशकार साहब वैसे साधारण से असाधारण स्थिति-पद-प्रतिष्ठा-मान-महत्व-धन-सम्पत्ति-प्रभाव-अधिकार-यश-गौरव प्राप्त करने वाले भाग्यशाली, प्रतिष्ठा-योग्यता सपन्न व्यक्ति थे। अपने पुरुषार्थ से उन्होंने महाराजा साहब के ऊपर विश्वास-प्रभाव जमा कर ही दो रुपये मासिक वेतन वाले नगण्य पद से राज्य के सब से महत्वपूर्ण, विश्वस्त पेशकारी के पद को प्राप्त किया था। वे महाराजा-साहब के खास पेशकार थे। राज्य के सभी महत्व-पूर्ण मामलों में तहरीर उनकी रहती थी, सिर्फ दस्तखत महाराजा साहब के होते थे। फैसले वे तैयार करके कलम बन्द करते थे, बस केवल मुहर भर महाराजा साहब की लगती थी। राज्य व्यवस्था के ऊपरी ढांचे वैसे कहने-सुनने-दिखलाने-मनबहलाने के लिए चाहे जिन-जिन की कारगुजारी-सलाह-सूझ-सिफारिश-कतर-व्योंत-दिमागी-उड़ान-प्रभाव-परामर्श के अनुसार बनते-बदलते रहते हों, किन्तु अन्तिम रूप दिया जाता था पेशकार साहब की कलम की तेज-पतली-पैनी, सफेद-स्याह करने वाली नोक से ही। महाराजा साहब को पेशकार पर अटूट भरोसा था, उनकी ईमानदारी पर पूरा विश्वास, उनकी योग्यता-क्षमता पर अनन्य आस्था। पेशकार के निजी जीवन के कारण ही महाराजा साहब उन पर इतना विश्वास कर सके थे। वर्षों से यह देखा जा रहा था कि पेशकार साहब एक कठोर तपस्वी साधु का-सा नियमित संयमित-त्यागपूर्ण जीवन बिता रहे थे। ऐश्वर्य-सम्पत्ति के बीच वे एक संसार त्यागी उदासीन बिरागी की तरह रह रहे थे। न ऐश्वर्य उन्हें लुभा सका था, न भोग उन्हें भुला सका था। राजसी

ठाटबाट के बीच वे अपनी साफ-सुथरी सादगी के लिए मशहूर थे। शाही हुकूमत, राजकीय शासन को चलाते हुए भी वे मद-दर्प से दूर ही रहते। रिश्वत-घूँस-नजर-भेंट-डाली-त्योहारी आदि पर नजर डालने तक की उन्होंने कसम खा रक्खी थी। न्यायनिष्ठ इतने थे कि अपने सगे को भी अपराध करने पर अछूता छोड़ने की तो बात ही नहीं, उसके साथ तनिक भी रियायत करने के लिए तैयार न होते। सरकारी कामों में जो देर-दार होती रहती है उसके वे सख्त खिलाफ थे। उन्हें यह पसन्द न था कि किसी सरकारी दफ्तर में आग लगे, उसके बुझवाये जाने के लिए ब-कायदा रिपोर्ट पेश की जाय, और सरकारी मोहक्मों के नियमित अनन्त चक्र मे पड़ कर पूरे बारह बरस बाद यह शाही फरमान इजरा हो कि आग बकायदा ठिकाने से बुझा दी जाये और ब-जाब्ता उसकी इत्तिला मोहक्मे आला मे की जाये।' वे यथा समय सब काम ठीक-ठिकाने से कायदे के मुताबिक करने के पक्ष में थे। ये ही सब कारण थे कि बारह बरस से भी ज्यादा समय तक पेशकारी करते रहने पर भी कोई उनके ऊपर अँगुली न उठा सका था, दोस्त-दुश्मन उनके खिलाफ एक हुरूफ भी न कह सकते थे; कोई भी छोटा-बड़ा उनके काम मे, उनके व्यवहार मे कोई नुक्स न निकाल सकता था, उनके बड़े-से-बड़े विरोधी भी उनकी नियत पर हमला न कर सकते थे।

पेशकार साहब उस जमाने में अंग्रेजी शिक्षा मे प्रवेश कर सके थे, जब राज्य के लाखों निवासियों मे शायद कुछ इने-गिने बड़ों को ही यह सौभाग्य प्राप्त हो सका था। और वे खुद अपने ही बल-बूते पर अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त कर सके थे, मामूली नौकरी करते-करते हुए ही। और नीचे-से-नीचे दर्जे से उठ कर अन्त में वे देखते-देखते इस उच्च शिखर पर जा पहुँचे। उनकी सात पीढ़ी में भी ऐसा रुतबा किसी को नसीब न हो सका था। महा-

राजा साहब खुद बड़े पारखी थे। वे वर्षों से इनकी गतिविधि देखते-ताड़ते-समझते-खोजते रहे थे। महाराजा साहब के पास जो इनके पहले पेशकार था, वह भी इसी प्रकार छोटी स्थिति से बढ़ते-बढ़ते ऊपर उठा था। उस पर भी महाराजा साहब की असीम कृपा थी। तरक्की पाते-पाते सारी जिन्दगी नौकरी करने के बाद अन्त में वह पचास-साठ मासिक वेतन पर आ सका था। किन्तु तनख्वाह तो कोई खास चीज होती नहीं। सरकारी तौर पर खुली हुई तनख्वाह तो बस इतनी ही भर होती है कि हाकिम के पान-पत्ते का ऊपरी खर्च किसी तरह पूरा होता रहे। आमदनी के जरिये तो कुछ दूसरे ही होते हैं। और रियासत वाले इन बातों से बिल्कुल बेखबर हों सो बात भी नहीं है। महाराजा से लेकर अदना मेहतर तक खूब अच्छी तरह से जानता है कि अफसरी रौब कायम रखने के लिए बड़ी शान शौकत की, खासी टीमटाम की जरूरत पड़ती है। हर एक तह-सीलदार अपनी तहसील का एक छत्र बादशाह ही होता है। उसे दो-तीन अबलक घोड़ों को मजबूर होकर रखना ही पड़ता है। प्रत्येक घोड़े पर दो-दो नौकर जरूरी होते हैं। फिर तहसीलदार साहब के खिदमतगार, रसोइये, पानदान-पीकदान वाले, मालिश-स्नान कराने वाले, पखे-छड़ी वाले तो निहायत जरूरी है ही। और उधर जनानखाने में महरी, कहारी, नाइन, बारिन, सेविका, टहलुई के बगैर सरकारी अफसरी शान निभ कैसे सकती है। इन सब नौकरों-नौकरानियों के पूरे लवाजमे पर ही तहसीलदार साहब को सौ-सवा-सौ रुपये माहवार से कहीं ज्यादा खर्च करते रहना पड़ता है। फिर खाने-कपड़ों का खर्च जुदा है ही। और-और नवाबी सर्फ जो जरूरी होते है उनका तो जिक्र ही न करना चाहिये। और यदि असली तनख्वाह जो सरकारी खजाने से श्रीमान तहसीलदार साहब को सरकारी शाही फरमान

के मुताबिक मिलती थी वह पचास-साठ से ऊपर कभी नहीं होती थी। ऐसी हालत में भला ऊपरी वर्षा की ओर नजर चौबीसों घंटे तीसों दिन न गड़ा रक्खी जाये, तब तो तीसों दिन सोलहों दण्ड पूरी एकादशी ही बरतनी पड़े। यह है उस समय की राज्य व्यवस्था की एक हल्की झाँकी का नन्हा नमूना।

हाँ, तो पहले वाले पेशकार साहब को महीने-महीने जो सरकारी मंजूर शुदा तनख्वाह मिलती थी, वह पचास-साठ रुपये से ज्यादा न थी। पर उनका पुरुषार्थ तो देखिये! उन्होंने पेशकारी जिन्दगी के पहले पहर में ही अपने रहने के लिये जो आलीशान महल खड़ा करा लिया, उसकी कीमत उस सस्ती के पुराने जमाने में भी कम से-कम पूरा एक लाख रुपया आँका-माना गया। और जब उन पूर्ववर्ती पेशकार ने राज्य के कर्णधार श्रीमान् महाराजा साहब को अपने उसी नव-निर्मित शाही महल में भोजन के लिये पूरे राजसी दरबार के साथ निमंत्रित किया, तब तो सब की आँखें उसी ऊँचे पेशकारी महल की ओर बरबस उठ गईं। महाराज साहब ने सारे कमरों को घूम-घूम कर देखा, ऊपर-नीचे के भागों की सैर की। नवाबी तर्ज के साज-सामान की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से की। पेशकार की सुरुचि के लिये दाद दी। लेकिन साथ ही यह भी फरमा दिया कि अब तक जो हो गया, सो तो हो ही गया, अब आगे से सावधानी से काम करने की बड़ी जरूरत है ताकि किसी को कुछ कहने की गुंजाइश न मिले; दाल में नमक खाने से ठीक होता है, पर नमक के बारे में छटाक भर दाल डाल कर खाने से किसी की जबान पर काबू नहीं किया जा सकता; वही करना चाहिये जो सोहता रहे। महाराजा साहब सब जानते-समझते थे। पर तरह देना चाहते थे। उन्होंने छप्पन व्यंजनों का रसास्वादन अपने दरबारियों-अफसरों-भाई-बन्धों-पवाईदारों-इलाकेदारों के साथ प्रसन्न बदन से किया।

चकायदा नजर-निछावर हुई, राग-रंग का समाँ बंधा और अन्त में पेशकारी महल का समारोह समाप्त हुआ। और कुछ ही दिन बाद, देखते-देखते पुराने पेशकार के दौरदौरे का प्रभाव-प्रसार का, पद-प्रतिष्ठा का अन्त होकर ही रहा। महाराजा साहब की वह मीठी झिड़की और सावधान करने के लिये दी गई उत्तम सलाह एक कान से सुनकर दूसरे कान से साफ निकाल दी गई थी। एक बहुत ही बड़े रिश्वत के मामले में पुराने पेशकार खुद महाराजा साहब द्वारा ही पकड़े गये और वहीं उनके कार-नामों का अन्त भी कर दिया गया।

राज्य व्यवस्था के लिये अधिकारियों की आवश्यकता पड़ती ही है। एक जाता है, दूसरा आता है। पुराने पेशकार के स्थान पर ये नये पेशकार बहाल किये गये। इन्हें पहले से ही सावधान कर दिया गया। और इन्होंने उस पर ध्यान दिया, उसी पर अमल किया। वर्षों, अथवा यों कहे कि युगों को मजे में बीतते देर न लगी। इन नये पेशकार साहब के कामों से सब संतुष्ट थे। उनके व्यवहार से सभी प्रसन्न थे। उनका मन इधर कुछ दिनों से संसारी मायाजाल से ऊब कर पूजा-पाठ, धर्म-कर्म मे ज्यादा लगाने लगा था। उनकी स्त्री उन्हें छोड़कर परलोक सिधार गई थी। किन्तु वंश-लता का पूरा प्रबन्ध करने के बाद ही, पितरों को पिंड-पानी का पक्का प्रकार बैठालने के अनन्तर ही। पेशकार को पत्नी के वियोग ने विराग की ओर ढकेला। उन्होंने वैसे सभी संसारी सुखों को भरपूर भोग लिया था। पिंड-पानी देने और वंश-वृद्धि करने के लिये भी पुत्र-रत्न की प्राप्ति हो ही चुकी थी। अब सारी झंझटों से छूट कर केवल भगवद्-भजन मे लगने और पर-लोक बनाने के लिए छटपटाने लगे। वे पेशकारी से भी पीछा छुड़ाने का प्रयत्न करने लगे। पर महाराजा साहब उन्हें इतने जल्दी छोड़ने के लिये तैयार न थे। ऐसा योग्य, सात्विक, छल-

कपट-रहित, रिश्वत-घूँस से परे न्याय-निष्ठ पेशकार मिलना इतना सरल देख न पड़ता था। और फिर पेशकार की उम्र भी तो वैसे ज्यादा न हो पाई थी। अभी वे चालीस के इसी पार थे। ऊपर से थी निश्चिन्त रूप से माला की खिलाई-पिलाई और संयमित-रक्षित जीवन। देखने में वे तीस के नीचे ही जँचते थे। हृष्ट-पुष्ट तगड़ा शरीर; गठीला कसरती बदन, गोरा निखरता रंग; सुर्ख, रोबदार चेहरा; चौड़ा, प्रशस्त ललाट, लाल डोरों से सुशोभित आभापूर्ण बड़ी-बड़ी आँखें। पर्वत शिखर-सा उन्नत मस्तक। भला ऐसे छँटे हुए मनुष्य को राजा छोड भी कैसे सकते थे। लाख कोशिश करने पर भी पेशकार पेशकारी से छुटकारा न पा सके।

नौकरी छोड़ कर भले ही पेशकार सन्यास न ले सके, पर अपने प्रतिदिन के जीवन में उन्ह ने जरूर ही एक संसार त्यागी तपस्वी का आचरण प्रारभ कर दिया। अपने मकान के सामने ही उन्होने अपने इष्टदेव शिव का अत्यन्त सुन्दर भव्य मंदिर बनवा लिया और अदालत या सरकारी दरबार के समय के अलावा जो भी समय बचता वे उसे ज्यादातर उसी मंदिर में बिताते। शास्त्रोक्त विधि से सोलह-उपचार सहित सपूर्ण पूजन पद्धति का संचालन किया जाता। नित्य प्रति विधि-विधान से शिव जी का अभिषेक होता रहा। उत्सवों, तिथियों, पर्वों आदि पर विशेष-विशेष प्रकार से अर्चा-पूजा-समारोह किया जाता। पेशकार स्वयं घंटों शिवार्चन में लगे रहते। कपूर-केसर से रंजित पचामृत से नित्य स्नान कराया जाता। सहस्र नामों से सहस्र बेलपत्र चढ़ाये जाते। बड़े जोम से एक सौ-एक बत्ती वाली आरती उतारी जाती। स्तुति, कीर्तन स्तोत्र पाठ होता। पेशकार एक रुद्राक्ष की माला जेब में डाले रहते और चुपके चुपके 'शिवोऽहम्' का जाप करते रहते। वर्षों से यह विधान चल रहा था। उनका जीवन इस सात्विकी ढर्रे में ऐसा ढल चुका था, कि

सभी को उनके सिद्ध होने का विश्वास हो गया था। वे डिगा जायेंगे, इसकी कल्पना तक कर सकना कठिन था। उनकी स्त्री के मरने पर अनेक बार शादी करने का उनसे अनुरोध किया गया। अनेक सुन्दरी सुशीला कन्याएँ उनको दिखलाई गईं। पर वे विवाह करने के लिए राजी न हुए। अनेक बार मामलों-मुकदमों के सिलसिले में राज्य-विख्यात मोहनियों ने उन पर अपने रूप का प्रभाव डालना चाहा, पर चिकने घड़े पर पड़ने वाले पानी की तरह, उन सब का कोई असर उन पर न पड़ सका। किन्तु काल की गति विचित्र ही है। जिस काम ने भस्म होने के बाद भी जाज्वल्य नेत्र वाले शिव को मोहित करके ही छोड़ा, उसने मेनका के मिस पेशकार के हृदय को मथ डाला हो, इसमें आश्चर्य की वैसे विशेष बात नहीं मानी जा सकती।

कृष्ण-जन्मोत्सव के अवसर पर मंदिर ऐसे पवित्रतम स्थान में जो प्रेमांकुर अंकुरित हुआ वह लाख चेष्टा करने पर भी नष्ट न किया जा सका। और उस प्रभाव को दूर करने के लिए पेशकार ने सब से सुन्दरी कन्या को तलाश करा कर फिर से शादी की। वे अपने मन के विकार को शास्त्रोक्त विधि से धार्मिक वृत्ति की ओर मोडना चाहते थे। धर्मशास्त्र में सभी तरह के विकारों को शान्त करने के उपायों का आयोजन जो दूरदर्शी ऋषियों ने कर रक्खा है।

पेशकार की शादी धूमधाम से हो गई। एक नई-नवेली गुलाब की कली-सी सुन्दर सुकुमार बहू ने घर में प्रवेश किया। वर्षों बाद तपस्वी पेशकार ने केलि-मंदिर में रात्रि के समय अपने को एक लावण्यमयी सुन्दरी के सामने पाया। छक कर उन्होंने इस नये रस का आस्वादन कर अपने अतृप्त मन को, अपनी प्यासी इन्द्रियों को तृप्त संतुष्ट करने की भरसक चेष्टा की। किन्तु इन सब प्रयत्नों में वे अपने मन की गाँस को निकालने में रहे

असफल ही। उसकी आँखों में मेनका की जो आँखें बस चुकी थीं, वे वैसे ही बसीं-की-बसी रह गईं। वे जहाँ नजर फेरते, वहीं बस मेनका की वेही अनियारी, कजरारी, कटीली, कातिल आँखें देख पड़तीं। उनके मनमे मेनका की जो मधुर मूर्ति बरबस प्रतिष्ठित हो चुकी थी, वह वहाँ से तिल भर भी न टल सकी। उस मूरत की बाँकी झाँकी के आगे एक भी सूरत न ठहरने पाती थी। उन्हें ऐसा लगता जैसे मेनका की बिजली की छटा के सामने किसी और दूसरी की ज्योति रेंडी के तेल के मिट्टी के मैले दिये की मंद-मलिन टिमटिमाहट मात्र हो। उनके लिये सभी हेच थी, सभी वमन-वत त्याज्य थीं।

विवाह सजाने, नवेली सुन्दरी गृहलक्ष्मी लाने, अपने घर के रति-उपवन में रास रचाने के बाद भी पेशकार मेनका की नजर की चोट को ठीक न कर सके। और अन्त में वे सर्वतो भावेन उसी के पीछे पड़ गये, कुछ समय के प्रयत्न के बाद उन्हें सफलता भी मिली। एक तो पद-मर्यादा, दूसरे रुपये के द्वारा बाँधा गया तूमार। फिर देखने-सुनने में भी वे वैसे बुरे न थे। मेनका उनकी ओर सदय हो गई। वे निहाल कर दिये गये। तपस्वी ने विलास-भोग मे अपने को निमज्जित कर दिया। पूजा छूट गई, जप-ध्यान विस्मरण हो गये। आचार-विचार बह गये। सात्विक भाव काम-केलि में सराबोर हो साफ हो गये। संतोष का भारी भरकम पहाड तृष्णा की अथाह जल-राशि में समा गया। बस, अब तो पेशकार साहब थे, मेनका थी और थे हास्य-विनोद, रास-रंग, गान-नृत्य, प्रणय प्रेम, मान-मनौवल, भोग-विलास। न समय का भान था, न संसार की किसी भी अन्य बात की सुधि। मेनका का मुखचन्द्र था और थे पेशकार के नयन-चकोर। पेशकार जिस एकान्त निष्ठा से शिवाराधना में संलग्न हो गये थे, उसी तरह सर्वतोभाव वाली प्रवृत्ति से वे

अब मेनका के रसास्वादन में तल्लीन हो उठे।

इस घोर परिवर्तन ने सभी का ध्यान उस ओर फेर दिया। सभी चकित थे, सभी नाना प्रकार की भावनाओं को लिए तरह-तरह की बातें कर रहे थे। किन्तु राज्यों में उन दिनों दो-चार सुन्दरियों की समाज सजाये रहना बड़प्पन का द्योतक समझा जाता था। जो ऐसा नहीं करता था वह यातो बेढब मूर्ख-कजूस समझा जाता था अथवा अप्सराओं को संतुष्ट करने में असमर्थ। पौरुष के ढिढोरे को पीटते रहने के लिए भी और अपनी उच्च स्थिति के तेज को जनता की आँखों में अँगुली डाल कर जतलाते रहने के लिए भी यह जरूरी था कि दस-पाँच युवतियों-सुन्दरियों-अप्सराओं को आत्मसात कर समय-समय पर जैसे भी हो उन सब का प्रदर्शन किया जाता रहे। ऐसी दशा में पेशकार का मेनका के पीछे पागल हो, उसको अपना सकने के कारण एक प्रकार से उस समय के उच्च समाज के अधिकांश भाग से पेशकार को शाबाशी ही मिला।

समय के साथ ही पेशकार मेनका के चंगुल में इतने फँसते गये कि उन्हें और किसी स्थान पर चैन ही न मिलती। बस दफ्तर जाते, जरूरत पड़ने पर दरबार में हाजिरी दे आते, और फिर जो भी समय मिलता, एक-एक मिनट मेनका के सुखद सहवास में बिता कर अपने को निहाल करते। अब उन्हें इतने दिन बाद ऊपरी आमदनी की भी आवश्यकता प्रतीत होने लगी। अप्सरा का खर्च मामूली तो हो नहीं सकता। फिर मेनका ऐसी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी का! जिसे प्राप्त करने के लिए हजारों विकल-बेहाल रहते हों!! सैकड़ों की तो बात ही करना बेवकूफी थी। हजारों भी योंही फुँक-उड़ जाते। किन्तु पेशकारी का ओहदा वैसे कोई मामूली पद नहीं था। कहा तो यहाँ तक जाता है कि राज्य के दीवान, मिनिस्टर, कमिश्नर से कहीं ज्यादा ऊपरी

आमदनी का पद होता था राजा के खास पेशकार का। जो भी हो, इतना जरूर हुआ कि इन पेशकार साहब को ऊपरी आमदनी के लिए किसी से कुछ कहना नहीं पड़ा। वे वर्षों 'दूध के पखारे', शुद्ध, सात्विक देवता बने रहे यह उनका दोष था और लोगों को भी उनकी इस ईमानदारी से बड़ा कष्ट, बड़ा क्षोभ-असंतोष रहा था। दुनिया में भला अपने मामले को दे-दिला कर कौन नहीं ठीक रास्ते पर लाना चाहता। और जब लोगों को इस बात का पता चला कि उनके देवता स्वरूप, त्यागी पेशकार साहब ने एक चमकती चिड़िया को पाल लिया है, तब तो वे सब बहुत ही प्रसन्न हुए। वे समझ गये कि मेनका ऐसी चिड़िया को पालतू बनाये रखने के लिए जिस चारे-दाने की जरूरत पड़ेगी, जो सोने की तीलियों वाला पिंजड़ा उसे सुविस्तृत सुनील गगन में स्वच्छन्द विहार करने से रोकने के लिए गढ़ा जायगा, उन सब के लिए चाँदी के गगनचुम्बी पर्वत को गलाना पड़ेगा। और उस रजत-पर्वत के ढोंके जुटाने पड़ेंगे उन्हीं आसामियों को जिनको पेशकार से काम निकालना होगा। मामला साफ था। लोग अपने-आप तैयार हो गये। पेशकार को इशारे तक न करने पड़े। सारा इन्तिजाम खुद-ब-खुद हो गया; सुदर्शनचक्र स्वतः भ्रमण करने लगा। रियासत की परिपाटी ही ऐसी बँधी रहती है।

और यह सारा चमाचम चाँदी का प्रवाह सीधा, बिना विघ्न-बाधा के, बहकर आने लगा मेनका के क्रीडोद्यान के पनाले मे। अब जब जीवनदाता जल-प्रवाह की बकायदा बाढ़-सी आने लगी, तब कोई गमगीन, मायूस रह ही कैसे सकता था। सभी मौज में थे। उमग दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ रही थी। रंग-रेलियों का समाँ बँध रहा था। पेशकार आनन्द विभोर थे। मेनका भी उनके आनन्द-उपभोग को सौ-सौ गुना बढ़ाते रहने में कोई कोर-कसर नहीं रख रही थी। सुन्दरी, संगीत एवं सुरति

के स्वर्गीय सुखोपभोग को सहस्र गुना बढ़ाने की शक्ति संचरित करने वाली सर्व-पूज्य सुरा की आराधना कैसे पिछड़ सकती थी! सुरा का भी समावेश हुआ और क्रमागत रूप से उसकी आराधना सब के सिरे पर पहुँच गई। पेशकार साहब इस भूतल पर जिन अलौकिक आनन्दोपभोगों से अब तक शिव-पूजन के कारण वंचित ही रहे जाते थे उन सब का अनुभव अब उन्होंने पराकाष्ठा को पहुँचा दिया। जीवन में इधर आने मे उन्होंने जितनी ही देर की थी, उतनी ही अधिक तीव्रता से उन्होंने अपनी बीती आयु की पूर्ति भी कर ली। वे इस मौज की दुनिया में भी आये तो सिरे पर ही जा पहुँचे।

पेशकार ने जिस लगन से मेनका की आराधना की, उससे उन्हें अप्सरा की प्रसन्नता एवं उस प्रसन्नता का तात्कालिक रमकेलि रूप प्रसाद तो मिला ही; इसके साथ ही धीरे-धीरे किन्तु निश्चित रूप से उन्हें वह अप्राप्य वस्तु सहज में ही हस्तगत हो गई जो साधारण रूप में हजारों-लाखों मे किसी बिरले ही सौभाग्यशाली को युगों मे ही नहीं सदियों में कभी-क्वचित ही नसीब हो पाती है। पेशकार साहब के प्रेम ने, उनकी एकान्त निष्ठा ने, उनके कपट रहित व्यवहार ने, उनके सर्वस्व निछावर करते रहने वाले सक्रिय कार्य ने, उसके सर्वतोभावेन तन-मन-धन-जीवन-प्राण अर्पण करने वाली निश्छल प्रेरणा ने मेनका ऐसी पेशेवर मंगलामुखी को भी बदल डाला। पेशकार के प्रगाढ़ प्रेम और अनन्य-भक्ति-भाव ने मेनका के मोलतोल वाले अश्रुधाती हृदय को भी पिघला कर ही छोड़ा। मेनका भी दिलो-जान से अपने इस अनोखे आशिक पर निसार होने लगी। यह सच है कि अभी इस नन्हीं, कच्ची, उठान वाली उम्र में ही उसने बहुत-से घर घाले थे। उसके पीछे पागल रहने वाले बहुत-से नवयुवकों को दिवालिया, दर-दर का भिखारी होना पड़ा था और चाँदी के

चले जाने पर अन्त में उनकी चाँद पर चमड़े के चॅवर चलवाये गये थे। वे सब मेनका के उठते यौवन से खिलवाड करने आते थे, वह उनके पास की चाँदी को चूसने की चालकी मे चौकस रहती थी। किन्तु पेशकार के असली पागलपन ने उसे भी उनके प्रति आकृष्ट होने के लिए विवश कर दिया। पेशकार ने उसकी हर फरमायश को पूरा किया, उसके ऊपर अपना सर्वस्व लुटा दिया। वह भी तहेदिल से उन्हें चाहने लगी। उसे उनकी दौलत भर से ही मतलब न रह गया। वह उन्हें अपना समझने लगी। उनके सुख-दुःख से उसे भी खुशी-रंज हासिल होने लगा। उन्हें तकलीफ मे देख, उसे भी चैन न पड़ने लगी। होते-होते नौबत यहाँ तक आई कि बिना पेशकार के मेनका को भी चैन न पड़ने लगी। धीरे-धीरे वह पेशकार को अपने अनन्य प्रेमी के साथ ही एक मात्र पति भी समझने लगी।

किन्तु यह सब यों ही बात-की-बात मे नहीं हो गया। इन सब घटनाओं को घटने मे काफी लम्बा समय बीता। और इस लम्बे अर्से में दुनिया के दूसरे स्त्री-पुरुष चुपचाप शान्त बैठे हों, यह बात तो नहीं थी। लोगो ने बड़े-बड़े काण्ड खडे किये, तरह-तरह की चर्चाएँ चलाईं, भारी-भारी कोशिशे कीं, जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाने में कोई बात उठा न रक्खी। पर पेशकार ने मेनका का दामन न छोड़ा, उन्होंने अपना रवैया न बदला, वे फिर पाक-साफ न बन सके। उन्होंने तोबा न की। और न मेनका ही उनको दुतकार सकी। इस बीच में दोनों 'एक जान दो कालिब' जो हो चुके थे। उन्हें न दीन से सरोकार था, न दुनिया से मतलब। उन्हें न तो नेक-नामी-बदनामी का डर रह गया था और न किसी के कुछ कहने-सुनने की परवाह ही। वे तो खुलकर मौज से खेल रहे थे, संसार के सर पर पैर रखकर, इस लोक की और परलोक की भी सुधि भुला कर ही।

किन्तु एक खास बात हो गई थी। पेशकार साहब अपने घर-द्वार को भुला चुके थे, अपने कुटुम्ब-परिवार से नाता तोड़ चुके थे, अपनी नव-जात शिशु कन्या एवं यौवन के प्रथम सोपान पर पदार्पण करने वाली विवाहित गृहणी से मुँह मोड़ चुके थे। जब घर में ऐसा कुछ सामान न रह गया जिससे गृहस्थी टूटे-फूटे ढग से भी चलाई जा सके, तब पेशकार की विवाहिता पत्नी ने ईर्ष्या-लाज एव सम्मान-सकोच की भावना को एक ओर ठेल अपनी अबोध बालिका को ले जाकर मेनका के पैर पर जा पटका। पहले तो मेनका झिझकी-सकपकाई, कुंपित-कुंठित-सी हुई; किन्तु माता-कन्या के ऊपर नजर पडते ही उसके भावों में एक दम परिवतन हो गया। वह समझ गई कि ये दोनों जंग छेड़ने या शिकायत करने नहीं आई हैं, वे तो केवल अपनी दीन-दशा की पुकार सुनाने के लिए उसके हुजूर मे हाजिर हुई है। और फिर बालिका थी तो आखिर मेनका के प्रियतम पेशकार की ही। प्रेमपात्र की सभी वस्तुओं के प्रति प्रेमिका को स्वतः ही अनुराग होता है। फिर वह तो थी उसकी आत्मजा। प्रेमी के अश से उत्पन्न उसी का नन्हा-रूप। मेनका झम्म से उठी और प्रेम से बालिका को उठाकर हृदय से लगा लिया। फिर पेशकार की गृहणी को आदर से बैठाया। गृहणी को इस प्रकार के व्यवहार की तनिक भी आशा नहीं थी। वह तो यह सोचकर आई थी कि जिस वेश्या ने मेरे स्वामी को मंत्र-मुग्ध कर जादू के बल पर मेढा-बकरा बनाकर अपने अचल के छोर से बाँध रक्खा है, उसको अपनी दयनीय दशा दिखला आऊँ और गृहस्थी में आग लगाने वाली उस डायन को दो-चार खरी-खोटी सुना कर अपना जी हलका कर लूँ। पर यहाँ तो बात ही बदल गई। मेनका ने बालिका को ऐसे ढंग से ललक कर छाती से लिपटाया मानो वह उसी की पुत्री हो और बाद मुद्दत के बिछुड़ने

के बाद मिली हो। उसने बच्ची को प्रेम-साध से दूध पिलाया, मीठा खिलाया और मन भर कर दुलराया-खिलाया। साथ ही गृहणी से इस प्रकार घुल-घुलकर बातें करने लगी जैसे वह उसकी सगी बहन हो। मेनका खुद तो गृहणी से उम्र में कुछ बड़ी ही थी, पर उसने पेशकार-पत्नी को आदर देने के विचार से दीदी कहना शुरू किया। मीठी-मीठी बातें कर मेनका ने घर की सारी बातें जान लीं। पेशकार सब से नाता तोड़ चुके थे। घर वालों को एक भी पैसा न देते थे। पुराने जमाने की जमा-जथा सारी चुक-चुका गई थी। अब पेशकार की गृहणी को घर-गृहस्थी के चलाने और मर्यादा से निर्वाह करने में कठिनाई हो रही थी। मेनका सारी स्थिति समझ गई। उसने कुछ रुपया देकर तथा सहानुभूति पूर्ण ढंग से बहुत-सी बातें समझा कर अपनी मुँह-बोली दीदा को बिदा किया। उस दिन से उसने पेशकार को यह समझाने की चेष्टा की कि तुम अपने घर का, अपनी पुत्री-पत्नी का भी ख्याल रक्खा करो। पर समझाने का कोई असर न हुआ। पेशकार के ऊपर उसकी इन बातों का भी कोई प्रभाव न पड़ा। वह तो दुनिया से नाता तोड़ केवल मेनका के पीछे पागल था। कहने समझाने का असर होते न देख मेनका ने अपना रास्ता बदल दिया। पेशकार जो भी रुपये-पैसे लाकर उसे देता, वह सब-का-सब ले जाकर अपनी दीदी के हवाले कर देती। अपने तथा पेशकार के खर्च भर के लिए कुछ रकम लेती, वह भी दीदी से माँग कर ही, उसे सारे खर्च का ब्योरा, लेखा-जोखा समझा कर ही। बहुत दिन तक यह क्रम चलता रहा। पर दुनिया को इसका वैसे ज्यादा पता न चलने पाया। सभी यही जानते थे कि मेनका पेशकार को अपने जाल में फँसा कर खासा माल मार रही है।

मेनका कहने के लिए एक खान्दानी वेश्या थी। उसके बाप

भी था, माँ भी, और पेशा चलाने वाली दूसरी सगी बहनें भी थीं। पर जैसे उसके रूप, स्वर और व्यवहार से अपनी अन्य बहनों से भारी भिन्नता थी, वैसे ही उसका स्वभाव भी दूसरी सभी बहनों से कुछ दूसरे ही प्रकार का था। उसकी पेशवर बहनें बावन तोले पाव रत्ती वेश्याएँ थीं। रूप के हाट में बैठकर ज्यादा-से-ज्यादा चाँदी हड़पना और किसी के साथ भी रू-रियायत न करना ही उनका पुश्तैनी-पक्का उसूल था। किन्तु मेनका का हृदय एकदम वेश्या-वृत्ति वाला ही न था। तोताचश्मी उसने शायद ही कभी की हो। और वह भी तभी जब उसके जहाँ-दीदा बाप ने, उसकी दुनिया को चराते-चराते बाल सफेद करने वाली बूढ़ी माँ ने और पेशे मे नाम कमाने वाली तेज-तर्रार बहनों ने बेहद जोर डाल कर उसे मजबूर किया हो। वैसे आम तौर पर वह इन झंझटों मे ज्यादातर पड़ती भी न थी। उसका गला बहुत ही मधुर था। राग-रागनियों की साधना भी उसने काफी कर ली थी। उसका अंग-अंग नृत्य-कला में प्रवीण हो गया था। इस कारण ज्यादातर तो उसका पेशा नाच-गाने का ही था। वैसी उलझन में वह तभी पड़ती जब राज्य के किसी ऊँचे ओहदे वाला मचल जाता, या किसी भारी रकम वाले से उसके माँ-बाप हजारों के वारे-न्यारे करने पर तुल जाते। इन मामलों के अलावा मेनका राग की आराधना के निमित्त जहाँ तक हो सकता एकदम अछूती ही रहना चाहती।

पेशकारी पचड़े में पड़ने के अनेक कारण थे। उसके माँ-बाप तो केवल चाँदी फँसने और पेशकार के प्रभाव से लाभ उठाने के उद्देश्य से ही उसे प्रोत्साहन दे रहे थे। किन्तु पेशकार के अनन्य प्रेम ने मेनका के हृदय को कुछ-का-कुछ कर डाला था। इस एकांत-प्रणय के कारण वह पेशकार के लिए रुपया ऐंठने वाली तोतेचश्म वेश्या मात्र नहीं रह सकी थी। इतने दिन के

संसर्ग, सहवास, सहयोग, सौहार्द के अनन्तर अब मेनका पेशकार को अपना मानने लगी थी और अपने तन-मन-धन पर पेशकार का एकाधिपत्य स्वीकार कर चुकी थी। पेशकार-गृहणी के उस दिन के आगमन ने उसे एक दूसरे ही रूप में प्रकट कर दिया। उसने पेशकार की उजड़ती गृहस्थी और ढहती मर्यादा की रक्षा-व्यवस्था का भार अपने कोमल-मांसल-सुडौल सशक्त कंधों पर रख लिया। पेशकार मेनका के घर पर पड़े रहते, सुरा के सुरूर में सुसुप्त से मेनका की मुख-ज्योति के किरण-जाल में आबद्ध-से और उनसे जो धन-रत्न प्राप्त होते उन्हें मेनका अपनी मुँह-बोली दीदी के हुजूर में पेशकर पेशकार की गृहस्थी की व्यवस्था करती, चुपके-चुपके, किन्तु निश्चित-दृढ़ भाव से। परन्तु मेनका का यह अनोखा त्याग, विचित्र व्यवहार अधिक दिनों तक उसके उडती चिड़िया पहचानने वाले पिता से और लिफाफा देखकर मजमून भाँफ लेने वाली चालाक माँ से छिपा न रह सका। भला उन्हें मेनका का यह आचरण कैसे अच्छा लग सकता था! वेश्या को किसी की गृहस्थी-मर्यादा की रक्षा-व्यवस्था के लिए अपना नुक्सान करना शोभा दे भी कैसे सकता है!! उन्होंने पहले तो मेनका को ऊँच-नीच समझा कर राह पर लाना चाहा और जब समझाने-बुझाने का कोई असर होता न देख पड़ा तब उन्होंने उससे लडना-झगड़ना शुरू किया। मेनका का शान्ति से रहना कठिन हो गया। पर उसने साफ कह दिया कि मैं वैसी वेश्या नहीं हूँ, मैं पेशकार को दिल से चाहती हूँ, उसको बरबाद नहीं होने दे सकती। तो भी उसे त्राण न मिला। माता पिता की खाँव-खाँव से छुटकारा न हुआ। किन्तु मेनका ने अपना काम जारी रक्खा। पेशकार की गृहस्थी मजे में चलने लगी, उनके पुत्र-कन्या का लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा का समुचित प्रबन्ध होता रहा, उनके मकान के सामने वाले उनके मंदिर के

शिव जी की पूजा-अर्चा-राग-भोग की भी ठीक-ठीक व्यवस्था होती रही, पेशकार की उजड़ती हुई गृहस्थी सँभल गई, उनकी ढहती हुई मर्यादा फिर दृढता से बँधी रह गई।

समय के साथ-साथ सुरा के प्रवाह में पेशकार क्रम-क्रम से अधिक तीव्रता लाते गये। पहले पेगों से गिनती होती थी। अब बोतलों की सख्या से हिसाब लगाया जाने लगा। एक्स्ट्रा नम्बर वन की एक-दो बोतलें रोज ही खाली हो जातीं। मामला यहाँ तक जा पहुँचा कि बिना एक बोतल के सुरूर के पेशकार का आला दिमाग ठिकाने से काम ही न कर सकता। और कुछ ही दिनों में सुरा की मात्रा की इतनी अधिकता का जैसा भीषण परिणाम होना चाहिए वह भी प्रकट होने से न रह गया। असर शरीर पर भी पडा और मस्तिष्क पर भी हुआ। अक्सर ज्यादा चढ़ा जाने के बाद झक-झक-झगडा-टंटा शुरू होने लगते। मेनका बहुत चिन्तित हुई। उसने मात्रा कम कराने की चेष्टा की, किन्तु अधिक सफल न हुई।

पेशकार ने मेनका से सम्बन्ध जोडने के बाद यह कोशिश की कि वह उन्हीं की हो कर रहे। पहले तो वे इस प्रयत्न में अधिक सफल न हो सके थे किन्तु जैसे-जैसे दिन बीतते गये और मेनका स्वय उनके प्रेम-बन्धन में अधिक-अधिक दृढ़ता से जकडती गई, वैसे-ही-वैसे वह अपने-आप अपने रूप-प्रदर्शन वाले पेशे को संकुचित करती गई। लोभी भौंरे आते, किन्तु उन्हें बाहर-ही-बाहर वापस जाना पडता। अन्त में उसने शरीर का व्यापार-कार्य बिल्कुल ही बन्द कर दिया। फिर धीरे-धीरे नाचने-गाने वाले शुद्ध-सात्विक व्यापार को भी कम करने लगी। जलसों-समारोहों के लिए बुलावे आते तो वह किसी-न-किसी बहाने से टाल जाती; माँ बाप द्वारा लिए गये बयानों को वापस करा देती। अन्त में सरकारी जलसों को छोड कर उसने नाचने-

गाने के लिए भी कहीं बाहर जाना बन्द कर दिया। उसे पेशकार से बातें करने, उन्हें रिझाने-बहलाने से ही फ़ुर्सत न मिलती। दिन-दिन भर वे दोनों प्रेमी एक दूसरे का मुँह जोहने और हँस-मुस्कुरा कर बातें करने में बिता देते; रात-रात भर प्रेमालाप करते हुए जाग कर सबेरा कर देते। मेनका के इन रवैयों से उसके प्रशंसक, पुजारी बौखला उठे, उसके माता-पिता खीझ गये; उसकी हमपेशा अप्सराएँ ताने देने लगीं।

किन्तु मेनका जितना ही अधिक अपना समय पेशकार की सेवा-सतुष्टि के लिए देती, उत्तरोत्तर बढ़ने वाली तृष्णा के कारण उसका पागल प्रेमी उससे और अधिक-अधिक ससर्ग सत्संग की हठ करता गया। अन्त में मेनका को खुल कर कहना पड़ा कि मैंने तुम्हारे खातिर अपना पेशा बन्द कर दिया, मजलिसों-जलसों में जाना रोक दिया, अब तुम और क्या चाहते हो? पेशकार का कहना था कि तुम इस घर से बाहर पैर तक न निकालो। किसी दूसरे की नजर तक मेनका पर न पड़ने पाये, यही पेशकार की एकान्त कामना थी।

किन्तु राज्य में और भी तो प्रभावशाली महानुभाव थे। उनके भी परखने वाले नेत्र थे, उनके सीनों में भी धड़कने वाला तेज दिल था। वे भी दुनिया में आकर शक्ति भर सभी तरह के सुखों का रसास्वादन कर लेने के पक्ष में थे। मेनका ऐसी अद्वितीय सुन्दरी का किसी एक के पिंजड़े में बन्द होना भला इन मनचलों को सहन कैसे हो सकता था। उनमें से दो ऐसे उच्च अफसर थे जिनसे पेशकार को भी डरते रहना पड़ता था। ये दोनों अफसर महाराजा साहब के कृपा-पात्र थे, उनके मुँह-लगे मुसाहब भी। उनकी एक बात से महाराजा साहब के विचारों में भारी अन्तर पड़ सकता था। और महाराजा साहब की नज़र के टेढ़ी होने पर कौन ऐसा था, जो राज्य में सकुशल रह सके? इसी

से इन पिट्ठुओं से सावधान रहने की जरूरत थी। और दैवयोग से इन्हीं दोनों की नजर मेनका पर थी।

पेशकार की हठ को रखने के विचार से मेनका ने पेशा तो एकदम छोड़ ही दिया था, नाचने-गाने का कार्य भी बन्द-सा कर दिया था। पर वह थी राज्य की मानी हुई वेश्या। सरकारी जलसों में उसका जाना जरूरी था। पेशकार को अफसरों की मंशा का पता था। इसी से उन्होंने जिद की कि तुम किसी भी जलसे में मत जाओ। पर मेनका इस रोक से होने वाले परिणाम को भली भाँति जानती थी। वह भी तो राज-दरबार की चालों से वाकिफ थी। उसकी सारी जिन्दगी ही राजसी वातावरण में व्यतीत हुई थी। उसे पता था कि मेरे कारण पेशकार पर बड़े-बड़ों की नजर है। जरा-सी चूक हुई और पाँसा पलटा। और इसी को बचाते रहने में उसने अपना सारा कौशल खर्च किया, समस्त प्रभाव से काम लिया। इसी कारण अभी तक पेशकार पर आँच न आने पाई थी। पेशकार को भी कुछ-कुछ इन बातों का पता था, पर सुरा के सर पर सवार होते ही सारी सुध-बुध भूल जाती। अजीब-अजीब मसूबे बाँधे जाते। ऐसी फरमायशें की जातीं जिनका पूरा होना साधारण बात न होती, ऐसे-ऐसे अफलातूनी फरमान निकाले जाते जिनकी तामील गैर-मुमकिन होती। ऐसे नादिरशाही हुक्म दिये जाते जिनका बजा लाना अमली तौर पर सहल न होता। प्रेमी-प्रेमिका में अक्सर इसी बात को लेकर झगड़ा होता कि सरकारी जलसों में भी नाचने के लिए जाना ठीक है या नहीं। पेशकार की जिद थी कि तुम कहीं भी मत जाओ। मेनका का कहना था कि पानी में रह कर मगर से बैर करना ठीक नहीं होगा; जब तक रियासत में रहना हो, तब तक महाराजा साहब को हर तरह से प्रसन्न रखने की चेष्टा से न चूको, सरकारी जलसों में शामिल होना निहायत जरूरी

है। राज्य की ओर से बुलाये जाने पर नाच के लिए न जाना, अपने सर पर आफत बुलाना ही होगा। किन्तु पेशकार को उसकी बात पसन्द न आती। जन्म भर सँभल कर चलने की कोशिश करते रहने वाला व्यक्ति अब सुरा की साधना के कारण सुबुद्धि खो बैठा था। उसे भी मद, दर्प, अहंकार हो गया था। वह भी अब अपने को कुछ लगाने लगा था। उसे घमण्ड हो गया था कि मैं महाराजा का खासुल-खास विश्वास-पात्र हूँ, मेरा कोई कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। अन्य अफसरों से ईर्ष्या-द्वेष भी जोरों से चलने लगा था। मेनका पर जिस-जिस की दृष्टि थी, उस-उस से पेशकार खार-खा बैठे थे। और पेशकार को चिढ़ाने, नीचा दिखलाने के लिए वे अफसर हर तरह की कोशिश कर बार-बार उसे राजकीय जलसों में तलब कराते। मेनका नाच के लिए जाती जरूर, पर लौटने पर लम्बे समय तक उसको पेशकार कल न लेने देते। रोज की भाँव भाँव से रिहाई पाने की गरज से अन्त मे मेनका ने पेशकार को समझा दिया कि मैं अब किसी भी जलसे मे नाचने के लिए न जाऊँगी। कुछ समय के लिए आपसी कलह शान्त हो गई। किन्तु बाहर वालों को अन्दरूनी बातों का पता चल गया था। वे बार-बार और जल्दी-जल्दी मेनका को नाच के लिए तलब कराने की बंदिशें बाँधने लगे। मेनका राज-काज के राज से काफी वाकिफ थी। वह इन नई चालों को भी समझ गई थी। किसी तरह अपना निस्तार न देख उसने पेशकार को राय दी कि यदि मुझे एकदम अपनी बना कर बन्द रखना चाहते हो तो राज्य छोड़ कर कहीं दूसरी जगह भाग

थी कि तुम किसी हालत मे इस जलसे मे नाचने के लिए न जाना। मेनका ने भी न जाने का इरादा पक्का कर लिया था। किन्तु जलसे के शुरू होने के बाद ही उसे विश्वस्त सूत्र से पता चला कि मेनका और पेशकार की शिकायत महाराजा के कानों तक बहुत ही भोंडी रीति से पहुँचाई जा चुकी है, और यदि मेनका इस जलसे में शामिल न हुई, तो उसकी और पेशकार की खैरियत नहीं है। मेनका को अपने लिए वैसा विशेष भय न था। लेकिन वह अपने कारण पेशकार को मिटते न देख सकती थी। उसने चुपके से तैयारी की, पेशकार को किसी तरह से टाल दिया और सटक कर मौके से जलसे में जाकर हाजिर हो गई। उसने अपने जौहर से महाराजा साहब को खुश भी कर लिया। दुश्मनो को करारी मुँह की खानी पड़ी। पेशकार की बरबादी उस समय तो सभाल ली गई। राजा के मुँह से यहाँ तक निकल गया कि पेशकार गिरा भी तो नायाब चीज पर ही, मेनका मे अलौकिक रूप भी है और लासानी हुनर भी, मेनका को देख कर ऋषि-मुनि भी विचलित हुए बिना नहीं रह सकते।

अपने कौशल से राज-दरबार में इस प्रकार विजयी होकर मेनका अपने स्थान पर लौटी। किन्तु उसके सामने पेशकार की जैसी मूर्ति पड़ी, उसने मेनका के हृदय को कँपा दिया। लाल लाल आँखें किये पेशकार एक पलग पर तकिये के सहारे अध-लेटा-सा पड़ा था। उसके पास इधर-उधर कई बोतलें खाली लुढ़कीं पड़ीं थीं। वह क्रोध से पागल था और नशे में चूर। मेनका ने उसे सारी परिस्थिति से परिचित

कराया, ऊंच-नीच समझाना चाहा। पर उस वक्त वह किसी भी समझ सीख की बात को सुनने-मानने के लिए तैयार न किया जा सका। वह बार-बार चिल्ला-चिल्ला कर बस यही कहता—'तू मेरे मना करने पर भी नाचने गई क्यों ?' और अन्त में उसने एक रिवाल्वर निकाल कर उसकी नली मेनका की ओर की। मेनका ने निर्भीक भाव से कहा—'इस कलहपूर्ण नारकीय जीवन से तो तुम्हारे हाथों गोली खाकर तुम्हारी गोद में प्राण दे देना उत्तम होगा।" "अच्छा, तो ले।" यह कह कर पेशकार ने हाथ बढ़ा कर एक झटका दिया। धाँय से आवाज हुई। बिजली-सी चमक गई। 'ओफ!' कह कर मेनका धड़ाम से गिर पड़ी। गोली उसके बांयें वक्ष को फोड़ कर पीछे से होती हुई दीवाल में जा घुसी। पेशकार के हाथ से रिवाल्वर गिर पड़ा। वह, "हा ! प्रिये !!' कह कर मेनका पर जा रहा। उसका नशा हवा हो गया था। उसका क्रोध शोक-क्षोभ में परिणत हो चुका था। जिसे वह प्राणों से भी बढ़ कर चाहता था, उसी को उसने प्रेम की बाढ़ में बह कर अपने हाथों गोली मारी थी।

कुछ देर के बाद मेनका को होश आया। उसके उपचार का प्रबन्ध किया गया। किन्तु उसने उपचार पर विशेष ध्यान न दिया। होश में आते ही उसने अपने प्राण-घातक पागल प्रेमी से प्रार्थना की कि तुम मेरे सामने चुपचाप बैठे रहो, ताकि मैं मरते समय केवल तुम्हें देखती रहूँ। इसके बाद उसने अपने माता, पिता, भाई आदि को कसमें खिलवा कर इस बात के लिए तैयार किया कि वे सब यही बयान दें कि मेनका सीढ़ी से नीचे उतरते

समय धोखे से फ़र्श पर आ गिरी और नीचे गड़ा हुआ एक कीला उसके वक्ष में घुस गया, किसी ने उस पर किसी भी क़िस्म का वार नहीं किया है। उसने डाक्टरों को बुला कर यही बयान दिया और हर तरह से राजी करके उन्हें अपने माफिक कर लिया। मरने के पहले उसने सरकारी अफसरों को बुलवा कर अपना बयान भी इसी तरह का दर्ज कराया।

पेशकार के रुपये ने और मेनका की पति-भक्ति ने कुछ समय के लिए मामले को दबा दिया। किन्तु मेनका के निराश प्रेमियों ने बाद में जोर बाँधा। पेशकार से वे मेनका के रहते पेश न पा सके थे। अब वे बदला चुकाने पर तुल गये। राजा से ख़ास तौर पर चुगली की गई। मामले को रंग-चुंग कर ऐसा रूप दिया गया कि राजा भी पेशकार से रूठ गया। मेनका की लाश कब्र से निकलवाई गई। उसकी हड्डियों की जाँच कराई गई। पेशकार की भी गिरफ्तारी हुई। डाक्टर, अहलकार आदि लपेट में आये। असली मामला खुल चला। अन्त में पेशकार ने अपने शिव-मंदिर में अपने हाथों से गोली मार कर अपनी जान दे दी। मरते समय उसने अपने रक्त से शिव को स्नान कराया। मरने के पहले उसने अपनी स्त्री को अपने पास बुलाया, पर वह डर के मारे उसके पास तक न गई।

मेनका ने जान दे कर भी अपने प्रेमी को बचाने की हर तरह से कोशिश की। किन्तु शायद शिव जी रक्त-स्नान के बिना संतुष्ट न हो सकते थे।

—

छेड़छाड़ का फल

एक एंगलो-इंडियन लड़की की शिकायत के आधार पर ईस्ट इंडिअन रेलवे के एक कर्मचारी पर मामला चला। हाईकोर्ट से बरी होने के समय तक उसे जितना परेशान होना पड़ा वह इस बात का उदाहरण है कि स्त्रियाँ अवला हो तो भी उनसे अकेले में मिलना कैसे खतरे की बात है।

रावलपिडी के एक पम्प-इन्सपेक्टर की पुत्री कुमारी इंगलिस केलिमपांग होम मे पढ़ती थी। उसकी अवस्था लगभग १३ वर्ष की थी। सिलिगुरी से एक बूढ़े नौकर के साथ, २० जून,१९३३ को वह रावलपिंडी जारही थी। कुछ समय के लिए लड़की इलाहाबाद मे उतरी। कुमारी इंगलिस एक दूसरे दर्जे के डिब्बे मे यात्रा कर रही थी। साथ मे और भी मुसाफिर थे। उसका नौकर हसन भी उसी गाड़ी से चल रहा था। जब गाड़ी कानपुर पहुँची तो और मुसाफिर गाड़ी से उतर कर चले गये। कुमारी इंगलिस डिब्बे मे अकेली रह गई। उसने ट्रेन के गार्ड से कहा कि आप मेरे नौकर को इसी दूसरे दर्जे के डिब्बे मे मेरे साथ चलने की इजाजत दे दीजिए। परन्तु गार्ड ने लड़की की प्रार्थना अस्वीकार कर दी।

इटावा स्टेशन पर बालमुकुन्द, टी० टी० ई० (ट्रेवलिंग टिकट एग्जामिनर) ने कुमारी इंगलिस का टिकट जाँचा। सबूत पक्ष का कहना था कि जब गाड़ी जसवंतनगर से रवाना हुई, तो अभियुक्त

मिस इंगलिस के डिब्बे मे घुसा, और जाकर उसी के पास बैठ गया। बालमुकुन्द ने लड़की से कहा कि तुम्हारी आँखें लाल हैं, इन्हे गरम पानी से धो डालो। फिर उसने अपने रूमाल को अपनी साँस द्वारा कुछ गरम किया और उसे लड़की के हाथ में देते हुए बोला कि इसी से अपनी आँखे पोंछ लो। इसके बाद अभियुक्त ने कुमारी इंगलिस की कमर मे हाथ डाला। कुमारी इंगलिस वहाँ से हटकर दूसरी गद्दी पर बैठ गई। अभियुक्त भी उसी पर आ पहुँचा। वह दुबारा अपना हाथ कुमारी इंगलिस की कमर में डालने की चेष्टा कर ही रहा था कि गाड़ी शिकोहाबाद स्टेशन के समीप पहुंच कर धीरे-धीरे चलने लगी। बालमुकुन्द झट उठकर चल दिया और गाड़ी रुकने के पहले ही डिब्बे से निकल गया। गाड़ी जब रुकी तो कुमारी इंगलिस ने गार्ड से कहा कि एक टी० टी० ई० ने मुझ से छेड़छाड़ की है। इस पर पाँच टी० टी० ई० उसके सामने खड़े किये गये, परन्तु कुमारी अभियुक्त को पहचान न सकी। गाड़ी के टूंडला पहुँचने पर गार्ड ने हैड टिकट एग्जामिनर से मामले की रिपोर्ट कर दी। परन्तु छेड़छाड़ का पूरा विवरण न शिकोहाबाद ही में बताया गया और न टूंडला ही मे। बाद को अभियुक्त पहचान लिया गया और उस पर अभियोग चला।

अदालत मे अभियुक्त की सफाई मे कहा गया कि कानपुर से कई एक टी० टी० ई० शिकोहाबाद के लिये उसी ट्रेन से रवाना हुए थे। अभियुक्त बालमुकुन्द टिकट जाँच रहा था। जब गाड़ी इटावा पहुँची तो अभियुक्त ने कुमारी इंगलिस और उसके नौकर दोनो को दूसरे दर्जे के डिब्बे मे सफर करते हुए पाया। बालमुकुन्द ने दोनो के टिकट देखे। नौकर के पास तीसरे दर्जे का टिकट था। टी० टी० ई० ने कानपुर से इटावा तक दूसरे दर्जे मे सफर करने का भाड़ा मय जुर्माने के माँगा। लड़की ने

आपत्ति की और कहा कि जब मै डिब्बे में अकेली चल रही हूँ तो मुझे अधिकार है कि मैं अपने नौकर को अपने साथ रख लूं। अभियुक्त ने उससे कहा कि तुम्हे ऐसा कोई अधिकार नहीं है, और तुम्हे कायदे के हिसाब से भाड़ा चुकाना होगा। लड़की ने जब फिर इनकार किया तो अभियुक्त ने उससे कहा कि यदि तुम इनकार करती रहोगी तो पुलिस से मदद माँगनी पड़ेगी। यह सुन कर कुमारी इंगालीस ने किराया मय जुर्माने के चुका दिया और उसे नौकर के नाम से एक रसीद दे दी गई। बालमुकुन्द तब किसी अन्य दर्जे के यात्रियो के टिकट जाँचने चला गया। जसवन्त नगर मे उसने फिर नौकर को लडकी के डिब्बे मे देखा। उसने लडकी से कहा कि यदि तुम इसे अपने पास रक्खोगी तो फिर तुम्हे रुपया देना पडेगा। लड़की ने अभियुक्त से प्रार्थना की कि नौकर को मेरे साथ रहने दो, परन्तु अभियुक्त ने इनकार किया। इस पर लड़की चिढ़ गई और कहने लगी कि तुमको मुसीबत मे फँसा दूँगी। इसके बाद अभियुक्त एक ड्योढ़े दर्जे के डिब्बे मे गया और उसमे भी तीसरे दर्जे का टिकट लेकर सफ़र करते हुए पाये गये दो आदमियो से उचित भाड़ा और जुर्माना वसूल किया। अभियुक्त ने अदालत मे कहा कि लड़की ने मुझ पर झूठा मामला चलाया है। इसका कारण यह है कि मैंने उसके नौकर का उसके साथ यात्रा करने की इजाजत नही दी और फलतः वह मुझसे नाराज हो गई।

मजिस्ट्रेट तथा सेशन जज दोनो ने कहा कि अभियुक्त ने झूठी गवाही पेश की है। रेलवे कर्मचारियो ने उसे बचाने के लिए झूठी शहादत देने का षड्यन्त्र रचा है, और उनकी बातो पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अभियुक्त पर ५०० रु० जुर्माना हुआ और आज्ञा हुई कि यदि वह जुर्माना न अदा करेगा तो उसे ५ महीने का कठिन कारावास का दंड भोगना पड़ेगा।

बालमुकुन्द ने हाईकोर्ट में एक दर्ख्वास्त निगरानी पेश की। हाईकोर्ट के जज महोदय ने सभी शहात पर गौर करने के बाद कहा कि लड़की ने पहली बार शिकायत करते वक्त यदि कथित छेड़छाड़ का पूरा विवरण बतलाया होता तो उसकी बातों मे ज्यादा जोर होता। क्योंकि तब यह समझा जाता कि लड़की को झूठी बाते बनाने का मौका नहीं मिला है। सम्भव है कि अभियुक्त ने उसके डिब्बे मे आकर उससे कुछ बातें की हों, जिनकी वजह से वह कहती हो कि उससे छेड़छाड़ की गई। छेड़छाड़ शब्द ऐसा है, जिसका कुछ भी मतलब लगाया जा सकता है और टिफट जॉचने को भी छेड़छाड़ कहा जा सकता है। सम्भावना तो इस बात की अधिक थी कि यदि वास्तव मे लड़की से छेडछाड़ की गई होती तो उसने उसका पूरा हाल गार्ड से शिकोहाबाद अथवा टूँडला स्टेशन पर बतला दिया होता। आगे चल कर माननीय जज महोदय ने कहा कि लड़की की शिकायत झूठी होने का कारण जो अभियुक्त बतलाता है, उसमे जोर है, किन्तु नीचे की अदालतो ने इस पर ध्यान नहीं दिया। दोनो अदालतें झट इसी नतीजे पर पहुँच गई कि रेलवे कर्मचारियो ने अभियुक्त को बचाने के विचार से झूठी शहादत देने का षड्यन्त्र रचा। मामले मे ऐसी कोई बात न थी जिससे अदालतें इस नतीजे पर पहुँचती। यह तो उनका अनुमान मात्र था।

नीचे की अदालतो की आलोचना करते हुए माननीय जज ने कहा कि इस मामले मे न्याय नही हुआ है। अभियुक्त की बाते लड़की की बातो से कुछ पुष्ट मालूम देती हैं।

अन्त मे अभियुक्त की दर्ख्वास्त निगरानी मंजूर हुई और उसकी सजा रद्द कर दी गई। माननीय जज ने आज्ञा दी कि जुर्माने के रुपये यदि अभियुक्त से वसूल हो गये हो तो उसे वापस कर दिये जायें।

पति-हत्या

३० वर्ष तक अपने पति के अत्याचार सहते-सहते तंग आकर एक स्त्री ने घर के बाग में उस पर ईंट से आक्रमण किया और उसे मार डाला। कलह पूर्ण दाम्पत्य जीवन के इस शोकप्रद अन्त का उल्लेख इङ्गलैन्ड के डारसेट नामक स्थान की अदालत में हुआ था। स्त्री पर अपने पति की हत्या का अभियोग चलाया गया। जूरी ने उसे हत्या के अभियोग से बरी किया, परन्तु उस पर घातक प्रहार का अपराध लगाया। स्त्री को जज ने १२ महीने के कारावास का दंड दिया।

मिसैज ऐमिली एलिजबेथ शियर्स (अवस्था ५६ वर्ष) का मामला जब अदालत के सम्मुख आया तो जूरी के सामने यह प्रश्न उठा कि अभियुक्ता ने यह अपराध आत्म-रक्षा की भावना से किया था, अथवा नहीं। घटना मिस्टर शियर्स के मकान के बाग में हुई। मकान मे पति और पत्नी साथ-साथ रहते थे। एक पड़ौसी के यहाँ आने वाले एक व्यक्ति ने इस घटना को अपनी आँखो से देखा था।

मिसैज शियर्स ने इसके बाद जो बयान दिये उनके कारण वह खुद फँस जाती थी, परन्तु उसके वकील ने अदालत मे इस बात पर जोर दिया कि स्त्री के बयानो पर विश्वास करना उचित न होगा, क्योंकि उस समय, अपने पति को मरा हुआ देख कर वह घबरा उठी थी। सबूत पक्ष की ओर से वकील ने कहा कि इसमे कोई सन्देह नही कि उस आदमी की जान अभियुक्ता के हाथो गई, परन्तु परिस्थितियो पर ध्यान देते हुए स्त्री पर केवल घातक प्रहार का अपराध लगाया जा सकता है।

शियर्स एक मकान बनाने वाले ठेकेदार के यहाँ फ़ोरमैन था।

उसने अपने हाथ से अपने लिए एक घर बनाया था। इसी घर में वह अपनी स्त्री और पुत्र के साथ रहा करता था। अदालत में बयान देते हुये शियर्स दम्पति के एक पड़ौसी वाल्टर ऐडम्स ने कहा कि मेरी समझ में ये दोनो बड़े अच्छे पड़ौसी थे। नौ वर्ष के भीतर उन्होंने मुझसे कभी बात-चीत तक नहीं की थी। शान्ति से वे केवल अपने दिन काटते थे। उस दिन एलबर्ट बर्बिज नाम का एक युवक मेरे बाग मे मौजूद था। उसने पिछवाड़े के दरवाजे से मिसैज़ शियर्स को भागते हुए देखा। उसने यह भी देखा कि उसका पति उसका पीछा कर रहा है। शियर्स के हाथ में एक बालटी थी। स्त्री सामने के दरवाज़े की ओर बढ़ रही थी। उसके पति ने बालटी उसके ऊपर उलट दी। उसका पति ठहर गया और बोला कि मै तुझे जान से मार डालूंगा। इसके बाद ही बर्बिज ने मिसैज़ शियर्स के पास से कोई चीज़ मि० शियर्स की ओर जाती हुई देखी और यह भी देखा कि स्त्री का पति ज़मीन पर गिर रहा है। बर्बिज इतने में मकान के भीतर चला आया। किसी के गिरने तथा कराहने की आवाज़ सुन कर वह फिर बाहर निकला। उसने देखा कि मिसैज़ शियर्स अपने पति के पास खड़ी हुई है। अभि-युक्ता ने बर्बिज से कहा कि ज़मीन पर गिर पड़ने के कारण मेरे पति के सिर में चोट आ गई है। इसके बाद ही फिर बर्बिज ने किसी चीज़ के गिरने तथा कराहने की आवाज़ सुनी। उसने श्रीमती शियर्स से पूछा कि मैं आपकी किस प्रकार सहायता कर सकता हूँ ? अभियुक्ता ने उत्तर दिया कि मुझे आपकी सहायता की कोई ज़रूरत नहीं है, आप कष्ट न करे। मेरे पति अभी अच्छे हो जायेंगे। थोड़ी देर में हमारा लड़का भी घर लौट आयेगा। बर्बिज तब मेरे मकान मे चला आया। परन्तु तीसरी बार उसे फिर वही आवाज़ सुनाई दी और वह निकल कर सड़क पर पहुँचा। श्रीमती शियर्स ने उससे कहा कि आप किसी को यहाँ

पर मत बुलाइये। परन्तु मि० लेग उसी समय न जाने कैसे घटनास्थल पर आ पहुंचे। उस समय स्त्री अपने पति के शरीर को एक ओवर कोट से ढक रही थी। कान्सटेबिल लेग से उसनें कहा कि अभी मैं घर से लौट कर आई तो मेरे पति यहाँ मिले। वह दीवर से प्लास्टर लगा रहे थे, मैं समझती हूँ वह प्लास्टर लगाते-लगाते नीचे गिर पड़े हैं। लेग ने स्त्री से पूछा कि तुम्हारे पति के साथ किसी की तकरार तो नहीं हुई थी। उसने उत्तर दिया कि यदि तकरार हुई भी हो तो मुझे आश्चर्य्य न होगा, क्योंकि मेरे पति की जबान बहुत ही खराब है। मि० शियर्स इस समय तक मर चुके थे। उनके सिर पर बड़ी चोटें आई थीं। शियर्स की खोपड़ी टूट गई थी, और सिर पर दस घाव हो गये थे।

सार्जेन्ट वार्टलेट ने मामले की तहकीकात आरम्भ की। अभियुक्ता ने सार्जेन्ट से कहा कि मै सिनेमा देखने गई थी। जब मैं लौटी तो हम दोनों में झगड़ा हुआ। मुझे डर है कि जब आपको मेरी करतूत मालूम हो जायगी तो मुझे आप पकड़ लेंगे। यह सब मैंने किया है। अपने लड़के के आ जाने पर मैं आपको सब कुछ बतला दूंगी। मैं समझती हूँ कि मुझे अपने पति के कारण फाँसी पर झूलना होगा।

बाद को स्त्री ने एक दूसरा बयान दिया, जिसमे उसने कहा कि मेरा पति चाय पीने घर आया। जब वह जाने लगा तो मैंने उससे कहा मैं कुछ घन्टो के लिए बाहर जाना चाहती हूँ। तब मैं सिनेमा देखने चली गई। रात को ८॥। बजे मैं घर लौटी तो मेरा पति अपने कपड़े उतार रहा था। उसने मेरे सम्बन्ध में एक गंदी बात कही और इसके जबाव मे मैंने कहा कि मैं बाहर मर्द की तलाश मे गई थी। इस पर वह बोला कि अभी आधे मिनट के अन्दर मैं तुम्हे घर से बाहर निकाल दूंगा। उसने बर्तन धोने के कमरे से एक बालटी मे पानी भरा और मैं सामने के द्वार से होकर

बाहर भागी। उसने मेरा पीछा किया और पानी मेरे ऊपर डाल दिया। मैंने एक पगडंडी पर पड़ी हुई एक ईंट उठाकर उस पर फेंक दी। जब वह जमीन पर गिरा तो मैंने फिर एक दूसरी ईंट उस पर फेंकी। यह सब मैंने आत्म-रक्षा के लिए किया। मेरा पति मुझको अगर पकड़ पाता तो मुझे अवश्य मार डालता। जब मैंने उसके सिर से रुधिर बहते देखा और जब मुझे यह मालूम हुआ कि वह एकदम चुप हो रहा है तो मुझे घबराहट हुई, और मैंने उसके मस्तक पर पानी डाला।

सबूत पक्ष का कहना था कि मि० शियर्स पहली ही ईंट की चोट से मर गये। इसके बाद तीन बार ईंटे उनके सिर पर और मारी गईं ताकि यह निश्चित रूप से मालूम हो जाय कि उनकी मृत्यु हो गई है या नहीं। ज़मीन पर चार ईंटें पाई गईं। हर ईंट पर आदमी का खून लगा था और प्रत्येक पर मि० शियर्स के-से बाल चिपके हुए थे। आत्मरक्षा मे ऐसा काम किया जा सकता है, परन्तु वह उसी दशा मे आत्मरक्षा का काम कहा जायगा जब अभियुक्ता अपनी जान लेकर भाग रही हो और जब आगे बढ़ना असम्भव हो जाय तथा अपनी मृत्यु का सच्चा भय उपस्थित हो। प्रस्तुत मामले मे पति स्त्री का पीछा नहीं कर रहा था। आत्मरक्षा मे तीन बार ईंट चलाना किसी प्रकार न्याय संगत नहीं कहा जा सकता। इसके अतिरिक्त स्त्री यदि चाहती तो उसे फ़ौरन मदद मिल सकती थी।

शहादत से यह बात भी मालुम हुई कि श्रीमती शियर्स अपने पति को जानवर कहा करती थीं और इस बात की शिकायत किया करती थीं कि परचूनी की दूकान तक जाने पर भी उसका पति उस पर पराये मर्द के पास जाने का इलज़ाम लगाया करता था।

गिरफ्तारी के समय स्त्री बहुत घबराई हुई थी, उस पर दूसरे

दिन हत्या का अभियोग लगाया गया। उसने सुपरिटेन्डेन्ट से स्वीकार किया कि उसने यह अपराध आत्मरक्षा के प्रयत्न मे कर डाला था। अदालत के कटहरे में जब श्रीमती शियर्स खड़ी की गईं तो उन्होने ने कहा कि ३० वर्ष हुए मेरी शादी मि० शियर्स से हुई थी। दाम्पत्य जीवन के आरम्भ मे भी मुझे सुख नही मिला। मेरा पति सदा से रूखा और मनहूस था। उसका स्वभाव भी चिड़चिड़ा था। उसका कोई मित्र न था। वह बाग में अकेला ही इधर-उधर फिरा करता था। उसकी राय मे मैंने कभी कोई काम ठीक नही किया। उसने मेरे साथ बल का प्रयोग भी किया था। एक बार तो उसने पागलो का सा काम किया। उसने मुझे जीने से नीचे ढकेल दिया। मैं डर के मारे निर्जीव सी हो गई थी। हम लोगो के चार बच्चे हुए। मेरे एक लड़के ने तो बाप के व्यवहार से तंग आकर घर तक छोड़ दिया। दुर्घटना की रात को जब मैं सिनेमा देखकर लौटी तो मेरा पति बड़े क्रोध मे था और बड़ा ही भयंकर मालूम होता था। मैंने उससे पूछा कि क्या तुमको मेरा बाहर जाना मेरे इस बुढ़ापे में भी बुरा लगता है? वह फौरन बिगड़ खड़ा हुआ और बोला कि यदि अब तुम्हारे मुंह से एक शब्द निकला तो मैं तुम्हे पॉच मिनट के अन्दर घर से बाहर निकाल दूॅगा। उसने एक बालटी मे पानी भरा। मैंने एक कटोरा उसपर उठाकर फेंका और बाहर की ओर भागना शुरू किया। मुझे तो केवल इतना ही याद है कि मैने उसपर एक ईट फेंकी थी। मैंने उसे पगडंडी पर पड़ा देखा और तब ज़मीन पर सरकती हुई उसके पास पहुॅची। तब मुझे मूर्च्छा आने लगी, और मैं घर मे जाकर कमरे मे बैठ रही। बाग मे फिर लौटी तो मुझे पति के शरीर के पास कुछ ईंटें पड़ी मिली। उन्हे उठाकर मैंने अलग फेंक दिया। मुझे यह ठीक याद नहीं कि उसके गिर जाने पर भी मैंने उस पर ईंटें फेंकी या

नहीं। मुझे विश्वास था कि यदि वह मुझको पकड़ पाता तो मेरी जान ले लेता।

जज ने कहा कि दूसरी ईंट फेंकना किस प्रकार आत्मरक्षा कहा जा सकता है यह समझ में नहीं आता। प्रस्तुत मामले मे स्त्री के पति की खोपड़ी बहुत ही पतली थी, परन्तु उस पर आक्रमण करने वाली अभियुक्ता अपनी सफाई मे यह तो नहीं कह सकती कि खोपड़ी की कमजोरी के कारण उसकी मृत्यु चोट लगते ही हो गई। यदि जूरी को विश्वास है कि मि० शियर्स अपनी स्त्री के हाथों से मरा तो जूरी को इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए कि स्त्री ने उसे आत्मरक्षा के प्रयत्न में मारा या नहीं। यदि उसे अपनी मृत्यु का भय वास्तव मे था, तो उसे बरी कर देना होगा। यदि इस प्रकार का खतरा नहीं था तो स्त्री पर हत्या का या घातक प्रहार करने का जुर्म लगाना होगा। भावों के आवेश मे या घबराहट में अगर स्त्री ने अपराध किया तो उस पर केवल घातक प्रहार करने का जुर्म लगाना ही उचित होगा।

थोड़ी देर तक विचार करने के बाद जूरी ने अभियुक्ता पर घातक प्रहार का जुर्म लगाना उचित समझा। जज महोदय ने जूरी का निर्णय स्वीकार करते हुए स्त्री पर घातक प्रहार का जुर्म लगाया और उसे एक वर्ष के कारावास का दंड दिया।

दंड सुनाते समय जज महोदय ने कहा यदि स्त्री इतनी बूढ़ी न होती और यदि पहले उसका आचरण अच्छा न रहा होता तो उसे और भी कठिन दंड भोगना पड़ता।

सुखी पागल

इङ्गलैन्ड के बरमिघंम नगर के बाहर एक युवा क्लर्क, एलफ्रेड जान्सन अपनी माँ और बहिन के साथ रहा करता था। पास पड़ोस के लोग इस सुखी परिवार मे चारो ओर प्रेम ही प्रेम देखते थे। युवक बड़ा ही शान्त, शुद्ध और कर्त्तव्य-निष्ठ था तथा अपनी माता और बहिन पर उसका हार्दिक प्रेम था।

जान्सन एक मोटर के कारखाने मे नौकर था। एक दिन नित्य की तरह वह सुबह काम पर गया। नाश्ता करते करते वह यकायक उठ खड़ा हुआ और अपने एक साथी से कहने लगा कि अब मै नही खा सकूँगा, मुझे घरेलू चिन्ताएं बुरी तरह सता रही हैं। कुछ घन्टे बाद युवक खून से रंगा हुआ थाने पर पहुँचा। उसके बयान को सुन कर सार्जेन्ट और पुलिस कान्सटेबिल उसके साथ उसके घर आये। वहाँ उन्हे एक करुण दृश्य दिखाई पड़ा। कमरे मे जान्सन की माता और बहिन मरी हुई पड़ी थी। उनके पैरो के पास पालतू बिल्ली और घर का कुत्ता भी वैसी ही दशा मे पड़े थे। प्रत्येक की गर्दन धड़ से अलग थी।

एलफ्रेड जान्सन पर, जिस की अवस्था उस समय २६ वर्ष थी, अपनी माँ और बहिन की हत्या का अभियोग लगाया गया।

युवक कठहरे मे मूर्तिवत बैठ गया। उस युवक का चेहरा पीला था और वह एक चटकीले रग का मफलर ओढ़े हुए था। सबूत पक्ष की ओर से कहा गया कि थाने पर जिस वक्त अभियुक्त आया, उसका चेहरा उत्तेजित था और हाथ खून से सने हुए थे। पुलिस से उसने बयान किया कि मैं अभी घर गया था, मैंने अपनी माँ, बहिन, कुत्ते और बिल्ली सब की हत्या कर डाली है। अपने इस बयान का महत्व मैं भली भाँति समझता हूँ। मैंने क्रोध

के आवेश मे नहीं, खूब सोच-समझ कर उनकी हत्या की है। मैंने पहले उन्हे अवाक कर दिया था।

अभियोग लगाये जाने पर अभियुक्त ने कहा कि मैं खूब समझता हूँ कि ईश्वर अथवा मनुष्य मुझे क्षमा नही कर सकते, मै फॉसी पर झूलने को तय्यार हूँ।

सफाई के वकील ने कहा कि इस कुटुम्ब को जानने वाले यह अच्छी तरह जानते है कि परिवार बड़ा ही सुखी था और अभियुक्त शान्त, शुद्ध और ऊँचे आदर्शों वाला आदमी था।

पादरी साहब ने अपनी शहादत मे बयान किया कि जिस समय अभियुक्त के पिता मरे, वह केवल १७ वर्ष का था। तब से घर का सारा बोझ उसी के सिर पर पड़ा। जान्सन बड़ा मेहनती था। युवावस्था के सभी सुखो पर उसने लात मार दी थी। वास्तव मे उसका जीवन संयम और त्याग का था। गत ६ महीने से उसकी आन्तरिक प्रेरणाएं कुछ विचित्र-सी होने लगी थीं। एक बार उसके पड़ोसी के यहाँ कुर्की वाले आये। जान्सन ने स्वयम् ऋणी बन कर उन्हें रुपया अपने पास से दे डाला।

पादरी ने आगे बयान किया कि अभियुक्त को आर्थिक चिन्ताएँ बहुत थीं। परन्तु कोई घनिष्ट मित्र न होने के कारण वह सारी बाते अपने ही मन लिये रहता था। उसके आदर्श इतने ऊँचे थे कि वह अपने मन मे गन्दे ख्याल न लाने का प्रयत्न किया करता था। कुछ दिनों से चिन्ता का बोझ अधिक बढ़ गया था। जान्सन के मन मे यह विचार आने लगा था कि दूसरे की सहायता के लिए चोरी भी करनी चाहिए। इस विचार के साथ साथ उसके मन मे यह शंका हुई कि मेरे इन कामो से माँ और बहिन बदनाम होगी। जान्सन का चित्त आन्दोलित हो उठा। गिरजा घर जाना भी उसने बन्द कर दिया। कुछ दिन बाद वह

का अभियोग चलाया गया है जिसकी सेवा मे वह रात-दिन लगी रहती थी। लड़का बिलकुल निकम्मा था। अपने लिए वह कुछ नही कर सकता था। उसका सारा काम उसकी माता किया करती थी। माता तो बराबर बेटे की उसी प्रकार सेवा करती रहती, परन्तु बीच में एक बड़ा संकट उपस्थित हो गया। माँ पर एक भारी आपरेशन करने की आवश्यकता डाक्टरों को महसूस हुई। स्त्री समझती थी कि आपरेशन मे उसकी जान का खतरा रहेगा, परन्तु वह अपने लिए तनिक भी चिन्तित न थी। उसको यदि कोई चिन्ता थी तो अपने पुत्र की। डेनिस वृद्धा के लिए एक जटिल समस्या बन गया। १५ सितम्बर की रात श्रीमती ब्राउनहिल ने बड़ी चिन्ता और कष्ट मे बिताई। १६ सितम्बर को रात को १०॥ बजे वह अपने बेटे के कमरे मे सोने के लिए गई। वह अपने पुत्र के शयनगृह मे ही सोती थी। उस समय तक तो सब कुछ नित्य की तरह ही चलता रहा। पर दूसरे दिन प्रातः-काल डेनिस दिखलाई न पड़ा। जब उस परिवार के डाक्टर आये तो उन्होने पूछा कि आज क्या हाल है ? स्त्री बोली—कुछ नहीं, डेनिस को मैने सुला दिया है। उसे एस्प्रीन की १०० गोलियाँ खिला दीं और उसके मुँह मे गैस की नली रख दी।

खोजने पर डेनिस अपने बिस्तरे पर मरा हुआ पाया गया।

आगे चल कर सबूत पक्ष की ओर से यह भी कहा गया कि सेशन सिपुर्द होने के बाद श्रीमती ब्राउनहिल अस्पताल भेजी गईं और उन पर सफलतापूर्वक आपरेशन किया गया। इसके बाद वह फिर जेल भेजी गईं। यह मामला बड़ा ही करुणा जनक है, और हर किसी को वृद्धा के साथ सहानुभूति होगी, परन्तु सफाई मे यह तो नहीं कहा जा सकता कि हत्या प्रेम के कारण की गई। मनुष्य का जीवन पवित्र है. और किसी की माता को भी यह अधिकार नहीं है कि वह अपने उस पुत्र की जान ले ले।

शहादत से पता चलता था कि माँ ने जिस प्रकार इतने दिनों तक अपने लड़के की सेवा की, वह वास्तव मे एक अद्भुत काम था। निस्सहाय बेटे की देख-रेख में उसने सारा समय बिताया। न तो वह कभी सिनेमा-थियेटर देखने जाती थी, न घूमने-फिरने। वह बराबर अपने लड़के के साथा ही रहती थी।

परिवार के डाक्टर ने अदालत में कहा कि डेनिस तो एक जीवित मृतक था। मरने मे उसे कोई कष्ट नहीं हो सकता था। यदि श्रीमती ब्राउनहिल आपरेशन न करवाती तो वह ज्यादा से ज्यादा ६ महीना और जीवित रहती। इसलिए उसको बराबर यह डर रहता था कि माँ के न रहने पर अब लडके को संसार की यातनायें झेलनी होंगी।

पुलिस के इसपेक्टर ने अपने बयान में कहा कि जब मैं पहले-पहल श्रीमती ब्राउनहिल से मिला तो उन्होंने मुझ से कहा था कि मैं आपसे सच्ची बात बतलाती हूँ, मुझे कोई वकील अपनी पैरवी के लिए नहीं चाहिए। परन्तु जब डेनिस की लाश दफनाने के के लिए निकाली जाय तो मैं उसे देखना चाहती हूँ। जब मैंने उससे कहा कि तुमने बुरी नीयत से जानबूझ कर अपने लड़के को मार डाला है, तो वह बोली—नहीं, बुरी नीयत से हरगिज नही, मैंने तो अपने बेटे को सुला दिया है।

अस्पताल के सीनियर सर्जन ने सफाई पक्ष की ओर से शहादत देते हुए कहा कि मैने श्रीमती ब्राउनहिल से कहा था कि तुम्हे आपरेशन कराना पड़ेगा। उन्होने पूछा कि बिना आपरेशन कराये मैं कितने दिन जीवित रह सकती हूँ, तो मैंने उत्तर दिया कि ज्यादा से ज्यादा ६ महीने। ऐसा मालूम होता था कि वृद्धा को अपने दर्द की कोई परवाह न थी। उसे केवल यही चिन्ता थी कि उसकी मृत्यु के बाद उसके लड़के का क्या होगा।

मैं तो सिर्फ इतना कहूँगा कि मानव-प्रेम का ऐसा उदाहरण

कम देखने को मिलता है। माता ने पहले से हत्या की बात नहीं सोची थी। अचानक जब उसे यह प्रतीत होने लगा कि अब मृत्यु मेरे सामने खड़ी है, तो उसके मन मे बार बार यही प्रश्न उठने लगा कि मेरे बाद मेरे लड़के की क्या दशा होगी।

जज ने जूरी के सामने मामला पेश करते हुए कहा कि इस अपराध को घातक प्रहार नही कहा जा सकता और न यही कहा जा सकता है कि स्त्री ने पागलपन के कारण अपने बेटे की जान ली। हम कह नही सकते, फिर भी सम्भव है वह समय भी आये जब इस देश मे निकम्मे अथवा बुद्धिहीन व्यक्तियो को दया-पूर्वक मार डालना कानूनन जायज हो जाय, परन्तु कानून अभी तो ऐसी इजाजत देता नही, और नया कानून बनाने का न आपको अधिकार है, न मुझको। हमे तो मौजूदा कानून पर अमल करना होगा साथ ही हमे यह ध्यान भी रखना होगा कि हम से ऊँचे अधिकारियो के हाथ मे अभियुक्ता पर दया करने का अधिकार है। इस देश मे किसी को दूसरे की जान लेने का अधिकार नही, चाहे वह मृत्यु उसके जीने से कितनी भी बेहतर क्यो न हो।

पॉच मिनट बाद जूरी ने अपना निर्णय सुनाया, अभियुक्ता अपराधिनी ठहराई गई। फोरमैन ने यह भी कहा कि हम इस बात की जोरदार सिफारिश करते है कि उस पर दया दिखाई जाय।

श्रीमती ब्राउनहिल ने कठहरे की लकडी को जरा मजबूती से थाम लिया और कहा कि मैने तो करुणा से प्रेरित होकर बेटे की जान ली थी।

जज ने फॉसी की सजा का हुक्म दिया और कहा कि दया की सिफारिश अधिकारियो के पास पहुँचा दी जायगी।

सजा सुनते समय श्रीमती ब्राउनहिल ने किसी तरह की घबराहट नहीं दिखाई। चुपचाप कठहरे से बाहर निकल कर सीढ़ियो

से उतर गई और हवालात के अन्दर घुस गई। उन्हें जेल मे लाया गया और फौरन अस्पताल मे चारपाई पर लिटा दिया गया। डाक्टरो ने सरगर्मी से उनकी जान बचाने की कोशिश शुरू कर दी। दो दिन बाद उन्हे समाचार मिला कि फाँसी की सजा रद कर दी गई है। तब वह शाँति पूर्वक सो गई। श्रीमती ब्राउनहिल को मुकदमे के आरम्भ से अब तक ऐसी गाढ़ी नींद कभी नही आई थी।

उनके लिए हर तरह की कोशिश की गई और जितनी जल्दी हो सका होम सेक्रेटरी ने उनकी फाँसी की सजा माफ करने की घोषणा कर दी।

होम सेक्रेटरी की आज्ञा सुनते ही मि० ब्राउनहिल ने पूछा कि—क्या मेरी पत्नी बड़े दिन तक जेल से लौट आवेगी? डेनिस के प्रति उसको इतना प्रेम था कि उसने अपने को बर्बाद कर डाला। एक देवी की भाँति वह लड़के के लिए बिना किसी से सहायता लिये ही अकेली काम करती रहती थी। एक दिन उसे मालूम हुआ कि उस पर आपरेशन होना आवश्यक है। मुझे वह दिन कभी न भूलेगा जब मेरा नाश्ता तय्यार करके वह सबेरे मेरे कमरे में आई थी और अत्यंत शातिपूर्वक कह गई थी कि डेनिस अब चिर-निद्रा मे सो रहा है।

लू-लपट वाला मज़ा

पुलिस परेशान थी। बड़े-बड़े अफसर बौखला उठे थे। छोटे-बड़े सभी आश्चर्य-चकित थे। सभी इस रहस्यमय डाके के बा। अधिक-से-अधिक जानने-सुनने के लिए उत्सुक-उत्कंठित-व्याकुल हो रहे थे। आगरे में ही क्या, दूर-दूर तक सनसनी फैल गई थी। डाका ऐसी-वैसी जगह पड़ा हो, सो बात नहीं थी। डाका पड़ा था विलायती डाक्टर लेफ्टीनेन्ट क्लार्क साहब के बंगले पर। और डाकू मेम साहबा को मार कर लापता हो गये थे। मजे की बात तो यह थी कि डाकुओं ने न तो रुपये-पैसे, जेवर-जवाहिरात, सामान-असबाब को ही छुआ था, न बाल-बच्चों को हाथ तक लगाया था और न और कोई नुक्सान ही किया था। जिस वक्त डाका पड़ा था, उस वक्त संयोग से साहब बहादुर बङ्गले पर तशरीफ नहीं रखते थे। वे अपने किसी मित्र से मिलने स्टेशन गये हुए थे। जब वे स्टेशन से लौटे, तो उन्हें अपनी मेम साहबा की लाश मिली। उन्होंने तुरन्त पुलिस में इत्तिला दी। बकायदा रिपोर्ट दर्ज कराई गई। तहकीकात शुरू हुई। मौका-मुआइना हुआ। सर-गरमी से जॉच-पड़ताश शुरू हुई। सभी को आश्चर्य इसी बात पर था कि बङ्गले पर डाका डाला जाये, और मेम साहबा कत्ल की जायँ, पर डाकू रुपये-पैसे, जेवर-समान को हाथ तक न लगायें, यहाँ तक कि चोरो-डाकुओं के जानी दुश्मन, कुत्ते तक को एकदम अछूता छोड़ दिया जाये। लोगों की जबान पर यही बात आती थी—'तब क्या डाकू सिर्फ मेम साहबा की जान लेने के लिए ही आये थे ?'

काफी जॉच-पड़ताल, सलाह मशिवरे के बाद अन्त में पुलिस इसी नतीजे पर पहुँची कि अपनी मेम को खपा डालने की नियत

से क्लार्क साहब ने खुद ही यह सब कण्ड रचा है। डाके के पहले क्लार्क साहब की एक अनुचित प्रेम-लीला की बेहद शोहरत फैल चुकी थी। हजारों आदमियों ने मि० क्लार्क को फुलम (अगाथा) नामक एक विधवा मेम से खुले-खजाने रंग-रेलियाँ करते, मजा-मौज उड़ाते देखा था। पुलिस को जो सुबूत मिले उससे उसको विश्वास हो गया कि इस विधवा के साथ खुले-खेलने के मंसूबे से क्लार्क साहब ने खुद ही अपनी मेम को कटक समझ कर सदा के लिए उससे पीछा छुड़ाने का प्रबन्ध इस डाके के रूप मे किया है। काफी सोच विचार के बाद क्लार्क साहब गिरफ्तार कर लिये गये। तफतीश जोर-शोर से जारी रक्खी गई। विधवा मेम फुलम (अगाथा) की प्रेम-लीला के कारण ही श्रीमती क्लार्क की जान ली गई—इसी बात पर जोर देकर शहादत जुटाई जाने लगी। बड़ी-बड़ी कोशिशें की गई; काफी दौड़-धूप की गई, मेरठ, देहली, इलाहाबाद आदि स्थानों की खाक छानी गई, पर वैसी ज्यादा पक्की शहादत हाथ न लगी। मजबूर होकर अन्त में पुलिस ने मेम साहबा फुलम (अगाथा) के यहाँ तलाशी लेने की जुर्रत की। पुलिस का ख्याल था कि चूँकि मिसेज फुलम (अगाथा) के प्रेम मे पागल होकर ही क्लार्क ने अपनी मेम को कत्ल कराया है, इसलिए मिसेज फुलम के पास से कुछ-न-कुछ सुबूत मिल ही जायेंगे। तलाशी ली गई। काफी सावधानी से जाँच की गई, पर वैसी काम की कोई चीज बरामद न हुई। अन्त मे पुलिस वाले निराश होकर चलने लगे। इसी समय संयोग से एक अफसर के मन में आया कि मेम साहबा के बिस्तर, पलंग आदि की जाँच भी क्यों न कर ली जाय। चलते-चलाते पुलिस वाले लौट पड़े। मेम साहबा के शयनागार मे बिस्तर के नीचे पूरे चार सौ ऐसे प्रेम-पत्र बरामद हुए जिन से मिसेज क्लार्क के कत्ल के अलावा विधवा मेम के पति मि० फुलम को जहर देकर मारे जाने की बातें

उसने बहुत चेष्टा की कि अदालत उसे अपने पुराने प्रेमी क्लार्क के विरुद्ध गवाही देने के लिए इजाजत देकर क्षमा कर दे, पर अदालत ने उसकी दरख्वास्त ना-मंजूर कर दी। विधवा अगाथा की इस घोरतर नीचता और जघन्य स्वार्थपरता ने सभी को दहला दिया। मि० क्लार्क से अनुचित सम्बन्ध जोड़ कर उसने अपने क्षमाशील प्रेमी पति को जहर देकर मरवा डाला, और साथ ही मिसेज क्लार्क को कंटक समझ कर हत्यारों से कटवा डाला। और उसी प्रेमी क्लार्क की सारी प्रेम-लीला को भुलाकर विधवा अगाथा सरकारी गवाह बन कर अपने प्रेमी के विरुद्ध अदालत के सामने सभी जघन्य बातों का साबित करने और प्रेमी को फाँसी के तख्ते पर चढ़वा कर अपने प्राण बचाने में तनिक भी उसे दरेग न हुआ। पर अदालत को उस नृशंस स्वार्थपर स्त्री की गवाही की जरूरत न समझ पड़ी और इसीलिए विधवा को न तो सरकारी गवाह बनने का मौका मिल सका और न क्षमा किये जाने की आशा ही देख पड़ी।

इसी चित्र के साथ लोगों को मि० क्लार्क का एक करुणाजनक चित्र भी देखने को मिला। उसे यह पता चल गया था कि उस को प्रेमिका उसके खिलाफ सरकारी गवाह बनने की चेष्टा जी-जान से कर रही है, पर तो भी उसने अदालत के सामने जो बयान दिया उसमें सारा दोष अपने ऊपर लेलिया और अपनी बेवफा मशूका को साफ छुड़ा देने की भर सक चेष्टा की। उसने साफ शब्दों में स्वीकार किया कि मिसेज फुलम मेरे प्रभाव के कारण ही अपने पति का जहर देने के लिए तैयार हुई थी, उसका उसमें कोई भी दोष नहीं है, अपराध की सारी जिम्मेदारी मेरी है, वह तो मेरे हाथों की कठपुतली मात्र थी, वह मेरे बश में थी, मैं उसे जैसा चाहता था, नचाया करता था इस कारण वह निर्दोष है। सारा अपराध मेरा है, और मुझी को सजा मिलनी चाहिए।

मरते-मरते क्लार्क ने अपने प्रेम का निर्वाह किया। अपनी बेवफा माशूका को बचाने की चेष्ठा में वह जो कुछ कर और कह सकता था, इसमे उसने कोई बात अपनी ओर से उठा न रक्खी। पर अदालत के सामने जो पुष्ट प्रमाण थे, उनके आधार पर यही निश्चित माना गया कि विधवा निर्दोष नहीं है। मि० फुलम और मिसज क्लार्क दोनो ही की हत्याओ में उसका पूरा हाथ रहा है, वह भी सभी बातो और परिणामो को पूरी तरह से जानते-समझते हुए ही और इसी कारण मि० फुलम और मिसेज क्लार्क दोनो ही के हत्या-काण्डो मे उसे अलग-अलग फॉसी की सजा सुनाई गई। क्लार्क को भी फॉसी की सजा दी गई और वह फॉसी पर लटका दिया गया। मिसेज क्लार्क को मारने के लिए सुक्खा, मोहन, बुद्धा और रामलाल नामक चार बदमाश तैनात किये गये थे। अदालत मे जो सुबूत पेश हुए उन से अदालत ने रामलाल को शक का फायदा देकर बरी कर दिया। बुद्धा सरकारी गवाह बन गया था, इस कारण उसे माफी बख्शी गई। सुक्खा और मोहन, दोनो को ही फॉसी हुई। लेकिन प्रमुख अपराधिन विधवा फुलम को दो बार फॉसी को सजा सुनाई गई, एक बार मि० फुलम की हत्या के मामले मे और दूसरी बार मिसेज क्लार्क के कत्ल के अपराध के सम्बन्ध मे। पर वह फॉसी के फन्दे से बे-लाग बच गई। उसके पेट मे बच्चा था, और अदालत ने बच्चे का ख्याल करके अपराधिनी माता को फॉसी पर लटकाये जाने से रोक दिया। किन्तु मौत इस कलंकिनी अपराधिनी को ज्यादा दिन तक छोड़ने के लिए तैयार न थी। मुकदमे के बाद कुछ ही समय मे कुलटा, पति-घातिनी विधवा फुलम (अगाथा) नैनी जेल मे अपने कर्मों पर बिलखती-बिसूरती सदा के लिये शान्त हो गई। किन्तु उसकी कलंक-कथा आज भी अदालत के रेकार्डों मे और जनता के

सामने उसी भयावह रूप में मौजूद है।

विधवा फुलम की पूर्व-गाथा कम विचित्र नहीं है। वह अपने सुकुमार सौंदर्य के लिए कलकत्ते भर मे मशहूर थी। नाम था अगाथा। आम तौर पर उस समाज मे कच्ची उम्र मे विवाह नहीं होता। पर अगाथा साधारण न थी। तेरवें वर्ष तक पहुंचते न पहुचते उसे प्रेम-लीला का भरपूर सक्रिय अनुभव हो चुका था। तेरहवें बरस को पार करने के पहले ही वह फुलम नामक उच्च कुल के युवक को अपने रूप-जाल मे फँसा सकने मे समर्थ हो सकी। लम्बी कोर्ट-शिप के बाद दोनों का बाकायदा विवाह हो गया। तेरह बर्ष की नई नवेली अध-खिली कली अगाथा ने धर्म और कानून के सामने खुलकर मिसेज फुलम होना स्वीकार किया। और प्रायः पूरे २७ वर्ष तक वह अपने कानूनी पति के साथ मजे मे रही। ऐसा तो हो नहीं सकता कि दीर्घ काल मे अगाथा ऐसी सुख-विलास की भूखी युवती प्रेम-प्रपंचो और प्रणय-लीलाओ से अछूती बनी रहे! पर न तो इन प्रणय-लीलाओ की लपट ही इतनी ऊँची उठ सकी कि जनता को बर-बस उस ओर ध्यान देना पड़े, और न प्रेम-प्रपंचो का प्रलाप ही इतना जोर पकड़ सका कि ससार के कानो तक वह जबर्दस्ती पहुँच ही जाये। फल यह हुआ कि अगाथा का वैवाहिक जीवन मजे मे ढकिलता चला गया। और मि० फुलम बढ़ते-बढते मेरठ मे डिप्टी कंट्रोलर आफ मिलेटरी एकौटस के पद पर जा पहुंचा। और वहीं उसका परिचय मि० क्लार्क से हुआ। क्लार्क इंडियन मेडिकल सर्विस मे लेफ्टीनेन्ट था, और मेरठ मे उसका अच्छा नाम था। यह १९०९ की बात है। इसी बीच अगाथा के बच्चा हुआ। डाक्टर के रूप मे क्लार्क ने बच्चा जनने मे मदद दी। यहीं से अगाथा और क्लार्क मे घनिष्ठता बढ़ी जो शीघ्र ही गुप्त प्रेम-प्रणय मे बदल गई। दोनो एक दूसरे के लिए जान

देने लगे, पर ससार ने इस ओर विशेष ध्यान न दिया, न प्रणय-लीला मे विघ्न पड़ा। १९१० मे क्लार्क की बदली देहली के लिये हो गई। इच्छा न रहने पर भी क्लार्क को अपनी नवीन प्रेयसी को छोड़ कर अपनी ड्यूटी पर देहली जाना पड़ा। पर वह हर हफ्ते मेरठ आने का अवसर निकाल ही लेता। बाद मे क्लार्क देहली से आगरा भेज दिया गया। पर आगरे पहुँचने पर भी उसका प्रेम कम न हो सका। वह बराबर आगरे से भी मेरठ आता रहा और अपनी प्रेयसी से प्रणय-लीला का निर्वाह करता रहा। किन्तु अगाथा का पति भी न तो बेवकूफ ही था और न इस काण्ड से बे-खबर ही। उसने क्लार्क के आने-जाने के सम्बन्ध मे जॉच-पड़ताल कर यह पता लगा लिया कि उसका मेरठ आना न तो सरकारी काम से ही होता है और न व्यापार-व्यवसाय के लिये ही। उसके बार-बार जल्दी-जल्दी आते रहने का कारण है अगाथा से अनुचित गुप्त प्रेम। और कोई भी पति अपनी स्त्री के एसे प्रणय-प्रपच को बस रहते सहन कर ले, यह हो नही सकता। फिर फुलम को अपनी प्रतिष्ठा और शाति का भी ध्यान था। उसने इस अनुचित व्यापार को रोकने की चेष्टा की। फल हुआ अगाथा और क्लार्क का कोप। अगाथा प्रति दिन बिला नागा अपने प्रमी क्लार्क को प्रेम-पत्र भेजा करती था और अपने प्रेमी के पत्र को लेने क लिये खुद डाकखाने जाती थी। जब मि० फुलम ने पत्नी के प्रणय-व्यापार को रोकना चाहा, तब पत्नी अगाथा उसे सहन न कर सकी। उसने प्रेम-पत्र मे अपने डाक्टर प्रेमी को लिखा कि तुम कोई ऐसी चीज दे दो जिससे यह अधम पति सदा के लिए सो जाये। और प्रेमी-पागल क्लार्क ने अगाथा को एक ऐसा जहर दिया जो धीरे-धीरे फुलम को निकम्मा करके मार डाले और जिसका वैसे किसी को पता भी न चले। अगाथा ने इसी जहर को अपने पति को खाने-पीने के

सामान मे देना शुरू किया। पर शायद जहर उतनी तेजी और जल्दी से काम न कर सका, जितनी शीघ्रता अगाथा ने चाहती थी। फलतः बाद के अपने पत्रो में अगाथा ने स्पष्ट शब्दो में लिखा कि इस दवा से काम न चलेगा, यह तो प्रेम-लीला में विघ्न डालने वाले पति फुलम को शान्त करने मे उतना कारगर नही है, इसे देते-देते तो शायद सैकडो-हजारो वर्ष बीत जायेंगे, और इतने लम्बे अर्से तक पति से पिड छुड़ाने की राह देखते रहने के लिए मेरे कलेजे मे न तो बूता ही है और न मेरे प्रेम-अधीर दिल मे धैर्य ही। तुम कोई तेज दवा दो, ताकि मामला जल्दी खत्म हो जावे क्लार्क भी तो प्रेम-अधीर था। उसे मिनट तो महीनो के बराबर हो रहे थे और दिन शायद वर्षों से भी ज्यादा लम्बे। उसने तेज जहर दिया और अगाथा ने अपने पति को उसे बडे कौशल से २७ जौलाई को खाने के साथ उसे खिला दिया। उसी दिन फुलम को खेल देखने के लिए जाना था। गरमी जोरो से पड़ रही थी। आसमान में बादलो का नाम निशान तक न था। धूप के कारण पृथ्वी जली जाती थी। इसी मौके को ठीक समझ कर अगाथा ने कौशल से जहर खिला ही दिया। जहर का असर हुआ। डाक्टर बुलाये गये। अगाथा ने बड़ा स्वॉग रचा, बड़ा तिरिया-चरित दिखाया। खूब दौड़ धूप की गई। बडी सावधानी से दवा-दरपन की व्यवस्था हुई। डाक्टरो ने देख-जॉच कर राय दी कि फुलम को लू लग गई है। दवा और तीमारदारी मे कोई कोर-कसर न रक्खी गई। कुछ दिन बाद फुलम लू-लपट से अच्छा तो हो गया, पर शरीर एक प्रकार से बेकाम-सा हो गया था। उसे छुट्टी लेकर आबहवा बदलने और स्वास्थ्य सुधारने के लिए मंसूरी जाना पड़ा। २ सितम्बर को मेडिकल बोर्ड ने अपना निर्णय दिया कि मि० फुलम का स्वास्थ्य इतना ज्यादा खराब हो गया है कि वह अपने जिम्मेदारी के पद

पर रह कर उचित रीति से कार्य संचालन नहीं कर सकता, इस कारण उसे रिटायर हो जाना चाहिये। इस निर्णय के बाद फुलम को नौकरी से अलग होना पडा। पहले उसने इङ्गलैंड जाने का निश्चय किया। पर अपनी पत्नी अगाथा के आगे उसकी एक न चली। कह-सुन कर, समझा-बुझा कर, मान-प्रणय का नाट्य कर के अन्त मे अगाथा ने अपने पति को आगरा चल कर रहने के लिए राजी कर लिया। फुलम इङ्गलैण्ड न जाकर आगरे मे जा बसा। पर ज्यादा दिन तक आगरे के आनन्दो का उपभोग करना उसके भाग्य मे बदा न था। वह ८ अक्टूबर को आगरे पहुंचा, और दो ही दिन बाद उसे आगरे में फिर लू-लपट का शिकार होना पड़ा। और इस बार की लू-लपट उसके प्राण लेकर ही शान्त हुई। लू लगने पर डाक्टर क्लार्क ने उसकी दवा बड़ी मुस्तैदी से की। और अन्त में उसे सारे कष्टो से, सभी झंझटो से, हर प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त कर के ही छोड़ा। अगाथा के एक छोटी बच्ची थी। उसने अदालत के सामने सिसकियाँ भरते, रोते-कलपते बयान दिया था कि मेरे पिता जब अन्तिम बार कष्ट से छटपटा रहे थे, तब उन्होंने मुझे बुलाकर प्यार किया था और कहा था कि मैं तो जा रहा हूँ, तुम नेक बनी रहना; मैने जब पूछा कि माँ को बुला दूँ, तब उन्होंने लंबी साँस छोड़ते हुए कहा था कि उसे मत बुलाओ, उसकी यहाँ कोई भी जरूरत नहीं है। पुत्री के बयान से स्पष्ट था कि मरते समय फुलम को अपनी पत्नी के जघन्य कृत्य का पता चल चुका था। अन्तिम समय क्लार्क ने आकर इजेक्शन दिया और फुलम सदा के लिए शान्ति से सो गया। अगाथा के जो पत्र बरामद हुए थे उनसे साफ जाहिर था कि वह इस बात के लिए चिन्तित थी कि कहीं इस जहर से फुलम ज्यादा तड़पे-छटपटाये न, उसकी चेष्टा विकृत-भीषण न हो जाये। और इसी को रोकने के लिए उसने क्लार्क को लिख कर

सावधान भी किया था। क्लार्क ने इस बात का ध्यान रक्खा कि फुलम की आकृति भयावह न होने पाये, वह तड़पने-छटपाने न पाये। और अन्तिम इन्जेक्शन मे उसने इतना तेज जहर भरा था कि फुलम को ज्यादा देर भोगने-तड़पने की ज़रूरत ही न पड़े।

फुलम की मृत्यु के बाद अगाथा ने बड़ा शोक मनाया, दुनिया को दिखाने के लिए सारी रस्में अदा कीं। किन्तु कुछ ही दिन बाद उसका यह स्वांग पूरा हो गया। वह खुल कर क्लार्क के साथ प्रेम-प्रपंच रचने लगी। सरेआम प्रणय-लीला चलने लगी। छोटे-बड़े सभी इस जुगल जोड़ी की बाँकी झाँकी और उनकी प्रणय-गाथा का आनन्द लूटने लगे। न क्लार्क को परवाह थी, न अगाथा को लिहाज। मिसेज क्लार्क अपने पति के इस कुकृत्य से कुढ़ती-जलती रहती जरूर, पर वह उसे इतना प्यार करती थी कि खुल कर उसने विशेष कुछ भी न किया। पहले तो दोनो प्रेमियो ने चाहा कि मिसेज क्लार्क तलाक दे दे, पर जब मिसेज क्लार्क ने तलाक देने की कोई इच्छा तक प्रकट न की तब अगाथा और क्लार्क बौखला उठे। उन्होने चार बदमाश को लगा कर मिसेज क्लार्क को मरवा डाला। और इसी हत्या की ज्वाला ने दोनो के प्रेम को ही नही, उनके जीवन तक को झुलसा डाला।

पवित्र कुलटा

'वह पाक-साफ रहने की हठ पकड़े हुए थी। वह एकदम पवित्र और शुद्ध रहना चाहती थी। वह अपने जिस्म को अछूता बनाये रहने के लिए जिद पकड़े हुए थी। उसने कभी अपने बदन पर मुझे हाथ नहीं लगने दिया। वह एक दम अछूती बनी रहने के लिए तुल गई थी। और आखिर मैंने आजिज आकर उसका हमेशा के लिए सुला दिया ताकि वह वैसी ही अछूती बनी रह सके, एकदम पाक-साफ, बिल्कुल शुद्ध-पवित्र। रात का सन्नाटा था। मेरा दीमाग परेशानी के सबब भिन्ना रहा था। मुझे सारी दुनिया चक्कर खाती नजर आ रही थी। मैं लाख कोशिश करता, पर मुझे बीवी मरियम के मन के भेद का पता न चलता। मै अपने आपे मे न था। इसी वक्त मेरी नजर मरियम के खूब सूरत, नींद भरे चेहरे पर पड़ी। वह बेखबर सो रही थी। चेहरे का रग सॉवला था, पर खूबसूरती बिखरी पड़ती थी। अपने बालो को उसने खूब बना-सॅवार कर सजाया था, कौशल से गूँथा-बॉधा था, टेढ़ी मॉग काढ़ी थी, मॉग के दोनो तरफ कायदे से पटिआया था। मुलायम बालो की पट्टियो से अजीब चमक दमक रही थी। इन सब ने मिल कर उसके चेहरे को—जो काफी धो-पोछ कर साफ किया गया था और बनाया-सजाया गया था—बेहद भड़कीला और आकर्षक बना दिया था। इन सब पर थी, साफ, बजहदार साड़ी, जो मामूली दामों की होते हुए भी बहुत ही भड़कीली और फबीली थी। उसने मरियम के चेहरे को, उसके लचीले, गॅठीले, छरहरे बदन को कई गुना ज्यादा खूबसूरत बना डाला था। आज मैंने दिन भर मे कई बार बेकरार होकर उसके प्यार को, उसके जिस्म को, उसके ... ...के अनूठे सुख को पाने की हर तरह स

कोशिश की थी, पर हर बार उसने मुस्कुराते हुए दृढ़ता भरे भाव से यही कह कर टाल दिया था कि वह अपने जिस्म को एक दम पाक-साफ रखना चाहती है. वह मेरी गदी बातों को सुनना भी पसन्द नहीं कर सकती, व्याहता बीबी होने पर भी वह मुझे अपने जिस्म को छूने देने तक को गवारा नही कर सकती। मैं कई बार आपे से बाहर हो गया, कई बार बौखला उठा, पर मरियम के आगे मेरी एक न चली, मेरा शौहरपना कुछ काम न आया। मरियम मेरी बीवी थी, शादी शुदा दुलहिन थी, कानून और धर्म के अनुसार हम दोनो का विवाह हुआ था, पर वह अपने जिस्म को मुझ से अछूता ही रखना चाहती थी। उस का कहना था कि शादी शुदा बीबी के लिए भी यह जरूरी नही है कि वह अपने जिस्म को अपने शौहर के हवाले कर दे, शादीशुदा बीबी भी अपने जिस्म को एक दम अछूता रख सकती है, बिल्कुल पाक-साफ अपने शादीशुदा शौहर से भी बचा कर। मै इन्हीं सब बातो की उधेड़-बुन में उलझा रहा। और मुझे मरियम की इन अजीब बातो और बे-नजीर जिद के साथ ही याद आने लगी कुछ बीच वाली घटनाएं जो मेरे विवाह से लेकर अब तक बराबर घटती चली आ रही थी। और जो उस की पवित्रता-शुद्धता की सनक के खिलाफ पड़ती थीं, जो उसे ऊपरी तौर पर पाक और असल मे पापिन, व्यभिचारिणी, कुलटा, बदचलन, मक्कार और जिद्दी पाजिन साबित करती थीं। और इन्हीं सब की उधेड़-बुन मे सारा दिन बीत गया और बीत चली आधी से ज्यादा रात। पर तो भी मैं शान्त न हो सका। मै बराबर सोचता ही चला गया। आज सारी पिछली बाते सिनेमा की रील की तरह तेजी से मेरे सामने आने लगीं।

'मेरी पहली नेक-बख्त बीबी इस दुनिया से कूच कर गई। वह मेरी तसल्ली के लिए एक बच्चा छोड़ गई थी। मैं उसी को

लेकर अपने मन को समझाता रहा। पर एक हट्टा-कट्टा जवाँमर्द कब तक बिना बीवी के घर मे चैन से गुजर कर सकता है। फिर मैं वैसे न तो कमजोर ही था और न मेरी उम्र ही बहुत ज्यादा गुजरी थी। मै पेशे से खानसामा था। खाना बनाने मे सैकड़ों मे एक ही। बड़े-बड़े नामी-गरामी खाना बनाने वाले मुझसे मात खा चुके थे। बड़े-बड़े अफसर-हुक्काम मेरे बनाये खाने की तरीफ करते न अघाते थे। मुझे कभी काम का टोटा न रहता था। खाने-पीने की जैसी सहूलियत मुझे रहती, वैसी तो शायद बड़े-बड़े नवाबो-रईसो को छठे-छःमासे ही नसीब हो सकती। और इसी लिए मेरी तन्दुरुस्ती बेहद अच्छी थी, मेरे बाजुओ में जवानो से कही ज्यादा जोर था, मेरी कमर मे कसरती-पहलवानो से बढ़ कर ताकत थी। मै मनो बोझ अपने कधो पर उठाये हुए मीलो हँसता-कुदकता-चहकता चला जाता। मेरे दोस्त-अहबाव मेरे पीछे पड़ गये। सब की राय थी कि मुझे जरूर दूसरी शादी कर लेनी चाहिये। मुझे भी घर सूना-सूना लगता, रातें काटे न कटतीं, मन न जाने कैसा भागा-भागा फिरता। इसी बीच में मुझे मरियम का पता लगा। वह सत्तरह-अट्ठारह बरस की हो चुकी थी, रंग था तो साँवला, पर बहुत ही खुलता हुआ, बेहद लुभावना। चेहरा तो जैसे खिला हुआ ताजा फूल ही हो। उस के तौरो-तर्ज भी सुहावनी-लुभावनी ही थी। सब से बढ़ कर थीं उसकी चमकदार अंगूरी आँखे और कोयल-सी सुरीली आवाज। जिसकी तरफ एक बार नजर उठाकर देख लेती, वह निहाल हो उठता; जिसके कान मे-उसकी सुरीली तान पड़ जाती वह जहाँ-का-तहाँ बेसुध हो खड़ा-का-खड़ा ही रह जाता। भला मैं क्यो न ऐसी परी-सी लड़की पर लाख जान से कुरबान न होता। मैंने ठान ली कि मैं मरियम को अपनी बीवी बनाकर ही दम लूँगा। और फिर मैं उसे दस्तयाब करने की धुन मे मस्त हो लग

गया। गरीब बाप को राजी करने मे वैसी कोई तरद्दुद न हुई। मेरी शादी खुले खजाने हो गई। और मेरी गाढ़ी कमाई का कुछ हिस्सा सर्फ हो गया पर मरियम को अपनी शादी शुदा बीबी बना कर ही दम ली।

'मरियम मेरे घर मे आई। मेरी खुशी का ठिकाना न रहा। यार-दोस्तों का, जात-बिरादरी वालो का, नाते-रिश्ते के लोगों का मैंने मुंह मीठा किया। मेरा मन सातवें आस्मान पर दौड़ लगा रहा था। पर जब मैंने अकेले मे मरियम को प्यार करना चाहा, उसके नजाकत भरे बदन को गोद मे लेकर खिलाना चाहा, जब फूल से मुँह को अपने हाथो मे लेकर चूमना चाहा, तब मरियम का मुझे एक नया ही रूप देख पड़ा। वह शेरनी-सी तड़प कर दूर जा खड़ी हुई और तेवर बदल कर बोली—खबरदार! मेरे जिस्म को हाथ न लगाना! मै ऐसी नापाक हरकतो को पसन्द नही करती। मैं एक दम पाक-साफ रहना चाहती हूँ। बिलकुल अछूती। समझे! उसकी भाव-भंगी देख कर मै सहम गया। मै उसकी खूबसूरती का पुजारी बन चुका था। मुझे उसके दिल को दुखाते बड़ा सदमा होता था। मै उसके साथ कोई जोर-जबरदस्ती कर ही नही सकता था। मैंने यह कह कर अपने को समझा लिया कि इतनी खूबसूरत और नेकवक्त लड़की की यह हठ भी मानी जानी जरूरी है। है तो आखिर वह मेरी शादी-शुदा बीबी ही। जायेगी कहाँ! कुछ दिन बाद तो वह अपने आप समझ जायेगी। इस वक्त उसका लड़कपन जोरो पर है। अल्लढ़पना जब कम होगा, तब खुद ही वह बीबी के फर्ज को अदा करने के लिए तैयार हो जायेगी। मै ने अपने दिल पर पत्थर रख कर सब्र की। मै तो मरियम को खुश रखना चाहता था।

'दिन बीतते गये। मरियम का रूप-लावण्य निखरता गया,

उसका बनाव-सिंगार बेहद बढ़ता गया, उसके प्रति मेरा आकर्षण बढ़िया की तरह तेज होता गया और साथ ही ज्यादा होती गई उसकी पाक रहने वाली अनोखी जिद। वह जब मामूली धोती-साड़ी को भी धुला-रंगा कर लेडियों-बबुआनियों की तरह बना-सजा कर पहनती, तो वह मुझे परी से भी ज्यादा मोहक लगती। उस समय मेरी बेकरारी की कोई इंतिहा न रह जाती। मैं दीन-दुनिया को भूल जाता। पागलों की तरह उसके जिस्म को पाने, शादी-शुदा बीबी से उसके फर्ज को अदा कराने के लिए बौखला उठता। पर वह थी कि अपनी छाँह तक मुझे छूने न देती।

इसी कशमश में वक्त गुजरता गया। और दिन पर दिन बढ़ती गई मेरी परेशानियाँ। अब कुँजड़े, कसाई, बनिये, बोहरे, धोबिन, मालिन सभी को रस ले-ले कर मेरी और मरियम की बातें सुनने-जानने में मजा-सा आता जान पड़ने लगा। सभी तरह-तरह की चर्चा उठाते, हजारों सवाल करते, हँस-मुस्कुराकर फबतियाँ कसने से, मजाक उड़ाने से न चूकते। सब से ज्यादा मुझे अखरती गोश्त वाले की तीखी मुस्कुराहट और हमदर्दी की चासनी मे पगी हुई व्यङ्ग भरी बातें। वे खुल कर तो कुछ न कहते, पर इशारा यही होता कि मरियम के सबब से ही मुझ पर साहब बहादुर की खास नजरे-इनायत है। वैसे तो मैं इन साहब बहादुर की खिदमत में काफी अर्से से जिन्दगी बसर कर रहा था, और सभी मुझसे इसलिए डाह करते थे कि मैं साहब बहादुर का खास कृपापात्र रहा हूँ। वे मेरा पूरी तरह से यकीन करते चले आ रहे हैं। न मुझसे कभी खर्च का हिसाब समझते, न रुपये-पैसे के बारे में ज्यादा पूछ-ताँछ करते। जितना और जैसा खर्च मैं उन्हें बतला देता उसी को वे बिला-गिला मंजूर कर लेते। कपड़े-लत्तों का भी मुझे कभी टोटा न पड़ने पाता। हर दूसरे-तीसरे माह साहब से मुझे नई-पुरानी कमीजें वगैरा मिला ही

करती। मेरे बदन पर नया कपड़ा देखते ही लोग मुस्कुराकर मुँह मटकाते, आँखे नचाकर इशारे करते और तरह-तरह की बातें करके यह जाहिर करना चाहते कि मैं साहब को उल्लू बनाकर खूब माल उड़ा रहा हूँ। साहब बहादुर ने अभी तक शादी न की थी, इसलिये घर के खर्च की और दीगर बातों की वैसी छान-बीन न होती जैसी कि शादीशुदा साहब बहादुरों की नई-पुरानी मेमें करती देखी जाती है। मेरे साहब खुद भी बहुत ही खुश-मिजाज और फैयाज तबीयत के आदमी थे। वे छोटे-मोटे खर्चों की वैसी ज़रा भी परवाह न करते। और इसी सबब से मैं उन्हें छोड़ कर किसी दूसरे के पास जाना भी न चाहता था।

'जब साहब को यह पता चला कि मैं दूसरी शादी करना चाहता हूँ तो वे बहुत खुश हुए। मुझे उन्होंने रुपये-पैसे से भी मदद दी। मरियम को जो नई साड़ी ले जाकर मैंने दी थी, वह साहब बहादुर की ही दी हुई थी। शादी के बाद जब पहली बार मरियम उनके सामने पेश की गई तो उनके चेहरे से साफ़ जाहिर हो रहा था कि वे उसे देख कर बहुत खुश हुये हैं। उन्होंने नई बीबी को खासा अच्छा इनाम भी दिया और आगे उसके आराम का ख्याल रखने का वादा किया। मरियम भी साहब बहादुर के बरताव से बहुत खुश हुई। वह उनकी दी हुई चीजों को पहनने में फख्र-सा समझती, मस्ती की मौज से झूम-सी उठती। और जैसे-जैसे वक्त बीतता गया, मरियम साहब बहादुर के आराम-खिदमत के लिए ज्यादा-ज्यादा मुस्तैदी और दिलचस्पी दिखलाती गई। साहब बहादुर भी उसकी जरूरत की चीजें इनाम के तौर पर देने में बेहद फैयाज़ी दिखलाते गये। होते-होते आये दिन सिंगार-पटार, पहनने-ओढ़ने, बनाव-दिखाव की चीजों की बौछार-सी मरियम पर साहब के जरिये की जाने लगी। पर मुझे पहले तो इसमें कोई बुराई, कोई खास ऐब न

देख पड़ा। आखिर मेरी गुजर चलती तो साहब की मेहरबानी पर ही थी। उन्हीं के कहने से मैंने यह दूसरी शादी की थी। उन्हीं की खिदमत में मैं रात-दिन लगा रहता था। अगर वे मेरी नई बीबी की जरूरियातों को पूरा करते रहते है, तो इसमें कैसी गैर-मुनासिब बात हो भी क्या सकती है।

'लेकिन पास-पड़ोस वाले, मेली मुलाकाती लोगबाग इन सारी बातों को किसी और ही नजर से देखने लगे। डाह के मारे उन्हें इसमें ऐब नजर आने लगा। पहले तो उन लोगों ने हँस-मुस्करा कर, आँख-भौंह मटका कर, मुँह-मटका कर, गर्दन हिलाकर इशारों-इशारों में जाहिर करना शुरू किया। फिर फब्तियाँ कस कर, फिकर-बाजी करके, टेढ़े-तिरछे सवाल करके मजाक के ढंग पर कुछ-न-कुछ कहना सुनाना जारी किया। और आखिर में कुछ बातें इस तरह पर जाहिर करनी चाही कि मैं सुन-समझ तो लूँ, पर उनसे यह न कह सकूँ कि वे बातें कही कैसे जाती हैं। सारी बातों का मतलब यही था कि मेरी शादी के पहले ही साहब ने मरियम को देख कर पसन्द किया था और उसे वे अपनी खिदमत में रखना चाहते थे, पर दुनिया की नजरों में साफ-पाक और ऊँचे बने रहने के ख्याल से वे खुल कर उसे रख न सकते थे, इसी लिए उन्होंने मुझे उल्लू बना कर उससे मेरी शादी करा दी और अब मेरी ओट में वे दुनिया की आँखों में धूल झोंक रहे हैं और मरियम से बेधड़क मौज कर रहे हैं। जब पहले-पहल मेरे कानों में इन बातों की भनक पड़ी तो मैं सन्न रह गया। मुझे इस तरह की बातों का कयास तक न हो सकता था। पर मैं आखिर था तो मर्द ही, और मर्द भी ऐसा-वैसा नहीं, खासा हट्टा-कट्टा। मैंने मरियम और साहब को ताड़ना शुरू किया। पर मुझे उस वक्त वैसी कोई बेजा हरकत नजर न आई। पर अब जो सारी बातों पर

गौर करता हूँ तो मैं इसी नतीजे पर पहुँचता हूँ कि लोगों की उन बातों मे कुछ-न-कुछ असलियत तो जरूर थी। यह हो सकता है कि साहब ने शादी के पहले मरियम को न देखा हो और उसके मुतल्लिक कुछ भी बंदिश न बाँधी गई हो, पर यह तो साफ जाहिर था, कि मरियम के आने के बाद साहब का रुख कुछ तो बदल ही गया था, और वे जरूरत और मामूल से ज्यादा इनाम-बख्शीस लुटाने लगे थे। मरियम भी उनकी तरफ हद से कहीं ज्यादा झुकी हुई थी। और बाद की बातो से तो मुझे यक़ीन हो गया था कि शायद मेरे यहाँ आने के साथ पहले दिन से ही मरियम ने समझ लिया था कि उसकी शादी तो एक बहाना भर रहेगा, असल में उसे अपने शौहर के मालिक, यानी साहब बहादुर की खास खिदमत करनी होगी। और इसी लिए वह मुझ से, अपने शादी-शुदा शौहर से अपने को अछूती रखना चाहती थी, ताकि साहब बहादुर की खिदमत एकदम पाक-साफ जिस्म से कर सके। मैंने उसे कई बार साहब के कमरे से निकलते देखा और पूछने पर हर बार उसने कोई-न-कोई खास काम का बहाना बना कर टाल दिया। एक-दो बार मैंने उसे साहब के बिस्तर पर भी देखा। पर मेरे कमरे मे पहुँचते ही वह सँभल गई और साहब के पैर दबाने लगी, यह कहते हुए कि साहब को दूर से पैदल आना पड़ा था इससे उनके पैरो में इतना दर्द हो रहा था कि कि वे बेचैन हो रहे थे, तुम लोग कोई थे नहीं, लाचारी हालत में मुझे उनकी खिदमत मे हाजिर होना पड़ा, आखिर है तो वे हमारे मालिक ही, हमे रोजी देने वाले, हमारी हर तरह से परवरिश करने वाले मुझे उसकी ये बातें अच्छी तो न लगी थीं, पर करता क्या, उसकी खूब-सूरती का जादू और साहब बहादुर की मेहर-बानियो के एहसानो का ख्याल मेरे मुँह को बन्द कर देते थे। पर मेरे मन में एक घुन पैठ गया था, जो मुझे बराबर अन्दर-ही-अन्दर

चरे डालता था।

'जैसे-जैसे दिन बीतते गये, वैसे-ही-वैसे मरियम और साहब की चर्चा जोर पकडती गई। अब तो मेरा राह चलना मुश्किल-सा हो गया। जहर-बुझी नजरें, तिलमिला देनेवाली तेज मुस्कुराहटें, दिल को टुकड़े-टुकड़े कर देने वाली फब्तियाँ मुझे बेचैन किये डालती थीं। मैं सब सुन-समझ कर भी जब्त किये दिन काटता चला गया। और उधर जोर पकड़ती गई यह बदनामी। साथ ही मरियम के जिस्म पर कब्जा पाने की मेरी बेकरारी भी जैसे-जैसे बढ़ती गई, वैसे-ही-वैसे मेरी बीबी की पाक-साफ-अछूती रहने वाली जिद भी ज्यादा-ज्यादा जोर पकड़ती गई। और अन्त में आई वह कत्ल की रात। उस दिन मैंने दोपहर के वक्त उसे साहब बहादुर के बिस्तर पर से नीचे उतरते खुद अपनी आँखों से देखा था, और सुना था उसके मुँह से वही पुराना पैर दबाने वाला खास बहाना। और ज्यादा जब्त न कर सकने के सबब से आज, शादी के इतने दिन बाद मुझसे उससे खुल कर झड़प भी हो गई थी। पर दिन मे मामला ज्यादा तूल न पकड़ सका। कामो की झंझट ने और साहब बहादुर के रौब ने, साथ ही मरियम की खूबसूरती के जादू ने भी मुझे दबा दिया। पर शाम को जब मुझे मिलने-बोलने वालो की जहर-भरी नजरों, तीखी मुस्कराहटो और झुलसाने वाली फब्तियो से फिर बेहाल होना पड़ा तो मैं आपे मे न रह गया। सारी बातो पर गौर करने के बाद मै इसी नतीजे पर पहुँचा कि या तो मरियम अब और ज्यादा पाक-साफ-अछूती न रहे और मुझे शौहर के फर्ज को अदा करने की इजाजत दे या वह अपनी इस ऊपरी पाकदामनी को अपने साथ समेटी हुई बिहिश्त की राह ले, क्योंकि इतनी ज्यादा पाक-साफ-अछूती औरत का इस दोजखी जमीन पर रहना जेबा नहीं देता। रात को मैंने हरचंद कोशिश की कि मरियम

मेरी शादी-शुदा बीबी मेरी बात मान जाये, पर उसके दिल पर मेरी किसी भी बात का कोई भी असर होता देख न पड़ा। आखिर मैंने आजिज आकर आधी रात के बाद उसका गला इस लिए रेत डाला कि वह दर-असल पाक-साफ-अछूती बनी रह सके। जब मैं उसका गला काटने लगा तब वह घबरा कर जाग उठी। उससे मैंने आखीरी वक्त यही कहा कि मरियम तू अब ज्यादा न तड़प, चुप रह, मैं तुझे हमेशा के लिए पाक-साफ रखने की कोशिश में ही लगा हुआ हूँ।'

ऊपर जो वर्णन दिया गया है, वह है मुजरिम पीटर के बयान का लब्बोलुआब, उसने अपनी शादी-शुदा बीबी मरियम को कत्ल किया था, और अदालत में साफ-साफ सारी बातों को कुबूल कर लिया था। अदालत पर उसकी बातों का बड़ा असर पड़ा, पर चूँकि उसने जुर्म करना कुबूल कर लिया था, इसलिए उसे सजा दी गई। लेकिन नर्मी के साथ ही। वह जेल भेज दिया गया। पर चूँकि वह खाना बनाने में बेजोड़ था, इसलिए उसे जेल के योरोपियन वार्ड में खाना बनाने का काम दे दिया गया। वह जैसे बाहर साहबों का खाना बनाता हुआ दिन बिताया करता था, वैसे ही वह जेल में भी साहबों का खाना बनाते हुए दिन काटने लगा। मरियम के प्रति सदा उसे ममता बनी रही ...

स्वेच्छाचारी पिता

दिल्ली में अब्दुल्लाखाँ नाम का एक पठान था। उसकी लड़की का नाम बलकिस जमानी था। पठान किसी काम से बम्बई चला गया और उसकी अनुपस्थिति में बलकिस जमानी का विवाह

उसके भाई ने मुहम्मद इदरीस नाम के एक व्यक्ति के साथ कर दिया। लड़की अपने पति के घर चली गई। अब्दुल्लाखाँ जब बम्बई से लौटा तो उसे इस बात पर बडा क्रोध आया कि लड़की की शादी बिना उसकी राय के कर दी गई। इसके बाद जमानी और उसके पति मे किसी वजह से अनबन हो गई। झगड़ा मिटाने के लिए पंचायत हुई और तय हुआ कि लड़की कुछ दिन के वास्ते अपने मायके चली जाय, फिर इसके बाद मुहम्मद इदरीस के घर लौट आये। निर्णय के अनुसार जमानी अपने पिता के यहाँ आई, परन्तु अब्दुल्लाखाँ उसे फिर ससुराल भेजने का इरादा नही रखता था। उसने यह इच्छा प्रकट की कि मुहम्मद इदरीस और उसके नातेदार मिलकर लडकी के जीवन-निर्वाह का खर्च देने के लिए एक दस्तावेज लिखे। मुहम्मद इदरीस ने अपनी स्त्री, बलकिस जमानी, को उसके मायके भेज तो दिया था पर पंचायत के फैसले के अनुसार कुछ ही दिन बाद अपने एक चचेरे भाई को अब्दुल्लाखाँ के यहाँ भेज कर उसने जमानी को वापस बुलाया। लडकी के पिता ने उसे बिदा करने से इनकार किया और कहा कि मुहर्रम की दसवीं के बाद मैं जमानी को भेजूँगा। मुहम्मद इदरीस फिर खुद अपनी ससुराल आया और लड़की के भाई से बोला कि हम लोगो ने जो इकरारनामा किया है उसे आप अपनी तरफ से पूरा करें और जमानी को मेरे घर पहुंचाने का इंतजाम कर दें।

लडकी के भाई अब्दुर्रहमान ने अपने बाप को इस बात पर राजी करने की कोशिश की। जमानी खुद ससुराल वापस जाना चाहती थी। जब उसके बाप ने इनकार कर दिया तो वह अपने भाई से बोली कि तुम एक डोली मँगवाओ, मैं जाने की तैयारी करती हूँ। अब्दुल्लाखाँ इस पर सख्त नाराज हुआ। उस समय घर के दालान में पठान और उसकी लड़की को छोड़ कर और

कोई नहीं था। अब्दुल्लाखाँ को मौका मिला और उसने एक छुरी उठा कर अपनी लड़की के शरीर मे भोंक दी। थोड़ी देर बाद बलकिस जमानी मर गई। घटना के समय घर मे पठान और बलकिस जमानी के अलावा दो व्यक्ति और मौजूद थे—पठान की दूसरी लड़की अस्तुल अजीज और उसका ९ वर्ष का भाई अताउर्रहमान। अब्दुर्रहमान कुछ समय बाद घर लौटा तो अपनी बहिन को मरी हुई पाया। अब्दुल्लाखाँ पर दिल्ली के सेशन जज की अदालत मे अपनी पुत्री की हत्या के अपराध मे, मुकदमा चला।

सबूत पक्ष का मामला मुसम्मात अस्तुल अजीज, अताउर्रहमान और अब्दुर्रहमान की शहादत पर अवलम्बित था। जज ने कहा कि बेचारे बच्चे अपने पिता के विरुद्ध गवाही दे रहे थे, इसलिए उन्होने आवश्यकता से अधिक कोई बात अभियुक्त के खिलाफ न कही होगी। मुसम्मात अस्तुल अजीज ने अपने पिता और बलकिस जमानी तथा उसके पति के पारस्परिक सम्बन्धो के विषय मे शहादत दी। बलकिस को ससुराल भेजने के लिए जो इकरारनामा हुआ था उसके सम्बन्ध मे भी इस लड़की ने बाते बतायी। आगे चलकर उसने कहा कि घटना के समय दालान में मेरे पिता और मेरी बहिन को छोड़ कर और कोई न था। बहिन का चिल्लाना सुन कर मैं आई और मैंने देखा कि वह दालान से निकली चली आरही है और उसके गले मे एक घाव है। मैं चिल्लाई कि अब्बा ने बहिन को मार डाला। कुछ ही देर बाद बलकिस मर गई। मेरी बुआ ने अब्बा से पूछा कि जालिम, तू ने यह क्या किया? बाप ने केवल यह कहा कि मैंने इसका काम तमाम कर दिया। मैंने अपने पिता के हाथो में कोई छुरी नहीं देखी और न उसे बलकिस को मारते हुए देखा।

अब्दुर्रहमान ने भी इसी प्रकार अपने बयान में सबूतपक्ष की बातों का समर्थन किया।

बालक अताउर्रहमान ने अदालत में कहा कि अब्बा ने बहिन के हाथ से कपड़े की गठरी छीन ली, फिर वे भीतर जाकर एक छुरी लाये और उससे बहिन को मार दिया।

सफाई पक्ष की ओर से सेशन जज के निर्णय के विरुद्ध हाई कोर्ट में अपील होने पर बालक के बयान के सम्बन्ध में माननीय जजों ने कहा कि लड़के ने इस हत्या को अपनी आँखों से देखा होगा, परन्तु जिरह होने पर, प्रश्नों का उत्तर देते समय लड़के ने कह दिया कि अपने बाप के हाथ में मैंने छुरी नहीं देखी और न यही देखा कि वह बहिन को मार रहा है।

अपील पर फैसला देते हुए हाईकोर्ट के माननीय जजों ने कहा कि सबूत-पक्ष की बातों के और भी प्रमाण प्राप्त हुए हैं। अब्दुल्लाखाँ के पाजामे पर आदमी के खून के दाग थे। घर के अन्दर से एक ऐसी छुरी भी बरामद हुई थी जिसमें इन्सान का खून लगा हुआ था।

इसी सबूत पर अभियुक्त मुजरिम करार दिया गया। जजों को इतमीनान था कि अब्दुल्लाखाँ पर ठीक जुर्म लगा और उसके खिलाफ काफी सबूत पेश हुआ। उन्होंने कहा कि मालूम होता है कि अभियुक्त को अपने घर का स्वामी होने का घमंड था और उसकी रग-रग में यह बात समाई हुई थी कि सभी घरेलू मामलों पर केवल उसी को अधिकार है। लड़की की शादी से वह नाराज हुआ और उसे तोड़ देने की उसने पूरी कोशिश की और अन्त में जब लड़की ने उसकी आज्ञा मानना अस्वीकार किया तो उसने लड़की की जान लेली, क्योंकि क्रोध ने उसे पागल बना दिया था। उसकी बड़ी लड़की और उसके लड़के की शहादत से और

उसके कपड़े पर पड़े खून के दागों से यह साबित हो गया कि अभियुक्त ने हत्या का अपराध किया है। अतः माननीय जजों ने उसकी अपील खारिज कर दी और सेशन जज द्वारा दी गई फाँसी की आज्ञा बहाल रक्खी।

मातृ मान रक्षा

विलायत के लीड्स नामक शहर के जज की अदालत में नोरा टैफिन्डर नाम की एक स्त्री पर अपनी ७६ वर्ष की बूढ़ी माता को मार डालने के अभियोग में मामला चला था। अदालत ने अभियुक्ता को अपराधी ठहराया परन्तु कहा कि स्त्री पागल है।

वृद्धा का नाम एन्स टैफिन्डर था। एक दिन अपने बिछौने पर वह मरी पाई गई। उसका गला किसी ने उस्तरे से काट डाला था।

नोरा टैफिन्डर पर आत्महत्या करने का असफल प्रयत्न करने का भी अभियोग चलाया गया था। उसकी अवस्था ४४ वर्ष की थी। बदन की कमज़ोर, आँखों पर चश्मा लगाये हुये, नोरा मुकद्मा पेश होते समय दो पहरेदारियों के बीच बन्दियों के कठहरे मे चुपचाप बैठी रहती थी। मुकदमे के दिनों मे वह एकहरी पोशाक पहने थी।

सबूत-पक्ष के कथनानुसार अभियुक्ता अपनी माता और भाई के साथ रहती थी। उसका भाई एक बेरोज़गार इंजीनियर था।

बूढ़ी माँ को १२ शिलिंग प्रति सप्ताह पेंशन के मिलते थे और नोरा प्रति सप्ताह लगभग ३५ शिलिंग कमा लाती थी। वह एक दूकान की मैनेजर थी। भाई चार वर्ष से बेकार बैठा था। नोरा एक मातृ-भक्त लड़की थी। सारे घर का खर्च वही चलाती थी और साथ ही घर का सब काम भी करती थी।

एक दिन बिना किसी नोटिस के वह नौकरी से हटा दी गई, क्योंकि उसके स्वामी ने उसे दूकान में चोरी करते हुए देख लिया था। उसने घर आकर अपनी माँ से कह दिया कि मेरी तबियत अच्छी नहीं है, इसलिए मैं कुछ दिन आराम करना चाहती हूँ।

चार दिन बाद नोरा के भाई को वृद्धा माता के कमरे से कुछ आवाज़ आती सुनाई दी, परन्तु नोराने उससे कहा कि माँ कोई भयानक स्वप्न देख रही थीं, मैंने उन्हें सुला दिया है। फिर इसके बाद सवेरे, बड़े ही तड़के, भाई को रसोई घर से भी रात की जैसी ही आवाज़ आती सुनाई दी। उसने जाकर देखा तो नोरा ज़मीन पर बेहोश पड़ी थी, और सारे कमरे में गैस फैल रही थी। नोरा पर गैस के ज़हर का असर तो पड़ा ही था, अलावा इसके उसका दिमाग भी खराब रहने लगा। होश में आने पर उसने अपने भाई से कहा कि माँ मर गईं।

इसके बाद श्रीमती टैकिन्डर अपने बिछौने पर मरी पाई गईं, उनका गला कटा हुआ था और नोरा के भाई का उस्तरा वहीं ज़मीन पर पड़ा था। नोरा ने आत्महत्या के पहले एक पत्र में लिखा था कि मैंने अपने मालिक की दूकान में चोरी करके अपने परिवार पर एक कलंक का टीका लगा दिया है। यद्यपि रुपया निकालते समय मेरा इरादा केवल उसे एक दिन के लिए लेने का था। घरके खर्च के लिए मेरे पास कुछ भी नहीं बचा था, और वह महीने का अन्तिम दिन था। दूसरे दिन मैं अपना वेतन मिलने पर उस रुपये को वापस कर देने का इरादा रखती थी।

किन्तु पकड़े जाने पर मै बहुत शर्मिन्दा हुई और कोई सफाई पेश न कर सकी। मेरा इरादा कितनी भी ईमानदारी का क्यो न रहा हो, वह थी तो फिर भी चोरी! माँ को मेरे इस कृत्य को सुन कर अत्यन्त ग्लानि होती। उनको अपमान और ग्लानि के कष्ट से बचाने के लिये मैने उनका गला ख़ुद काट डाला और अब अपने भी कष्ट, ग्लानि और अपमान पूर्ण जीवन का अन्त कर रही हूँ।

अपनी भावनाओं को भरसक दबाते हुए नोरा के भाई ने अपने बयान मे कहा कि बहिन परिवार से अद्भुत प्रीति रखती थी, यदि उसे कुटुम्ब की अवैतनिक दासी भी कह दे तो कोई अत्युक्ति न होगी। उसने अपने अपराध के लिये किसी प्रकार का पश्चात्ताप प्रकट नहीं किया। माँ को अपमान और ग्लानि से बचाने के लिये उसने यही आवश्यक समझा कि उसके जीवन का अन्त कर दिया जाय।

नोरा ने अपने भाई को जो पत्र लिखा था उसमे यह बात कही थी कि मुझे संसार से बिदा होने मे अत्यन्त सुख हो रहा है। माँ तो मुझसे भी अधिक सुखी हुई होंगी। तुम्हे भी मेरे लिए किसी प्रकार का अफसोस नही करना चाहिये। मेरी सद्गति के लिये प्रार्थना करने की जरूरत नही, मेरे शव पर फूल भी न रक्खे जायँ। कम से कम खर्च में मुझे दफनाना।

अदालत मे, नोरा जिस दूकान की मैनेजर थी उसके मालिक ने भी शहादत दी। उन्होने बतलाया कि मैंने अभियुक्ता को ५ शिलिंग चुराने के अपराध मे नौकरी से हटा दिया था। बाद को उसकी स्वामिभक्ति और ईमानदारी की याद करके मैंने उसे २५ पाउंड का एक चेक भी भेजा, पर अभियुक्ता ने उसे लौट दिया। चेक ही के साथ उसने दो शिलिंग भी भेजे और कहलाय

कि वह फिर और भेजेगी, किन्तु अब उसका दिमाग काम नहीं करता।

जेल के डाक्टर ने बयान दिया कि एक दिन बातचीत करते समय मुझे शक हुआ कि नोरा पागल है। दिमागी रोगों के विशेषज्ञ ने भी कहा कि उसका दिमाग ठीक नहीं है। वह अब भी आत्महत्या करने की प्रवृत्ति रखती है।

इसके बाद वकील ने जूरी से अनुरोध पूर्वक कहा कि यद्यपि नोरा यह जानती थी कि वह हत्या कर रही है, फिर भी वह यह नही समझती थी कि वह कोई अपराध कर रही है। अपनी माता तथा सारे परिवार को सकट से मुक्त करने का उसने विचित्र उपाय सोच निकाला था। माँ का अन्त भी उसने सोते समय किया। नोरा ने इस बात की प्रतीक्षा की कि जब माँ निद्रामग्न हो जायँ तभी वह उनकी हत्या करे, क्योंकि तब, उसे विश्वास था, उन्हे विशेष तकलीफ नहीं होगी।

शरीर की कमजोर होते हुए भी उसने सारे कुटुम्ब का वर्षों विना किसी शिकायत के पालन किया। यदि मुसीबतों ने उसके शरीर के साथ-साथ उसके दिमाग को भी बिगाड दिया और वह ऐसा अपराध कर बैठी तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

अन्त मे अदालत ने नोरा को अपराधिनी ठहराया और यह भी माना कि वह पागल भी है, अतएव वह पागल खाने मे बन्द रक्खी जायगी।

डबल चोरी

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे कुछ वर्ष पहले डाकुओं के संगठित गिरोह अमीरो या उनके सम्बन्धियों को पकड़ ले जाते थे और उनके घर वालों से रुपया माँगते थे। यदि रुपया नही दिया जाता तो पकड़े जाने के वालों की जान की खैर नहीं समझी जाती थी। इस दिन-दहाड़े की डकैती को रोकनेके लिए वहाँ की सरकार कड़ाई से काम लेने पर मजबूर हुई। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के कई प्रांतो मे तो इसके लिए मृत्यु दण्ड तक की घोषणा कर दी गई। सन् १९३३ के अक्टूबर मास मे एक युवक डाकू पर यही अभियोग लगाया गया था और वह अपने देश का पहला व्यक्ति था जिसे आदमी को भगाने के अपराध मे मृत्यु दण्ड मिला था।

इस सुन्दर युवक ने केवल कैन्सस शहर के मेयर (म्यूनिसिपल चेयर मैन) की पुत्री को ही नही चुराया था, वरन् साथ मे उसका हृदय भी चुरा लिया था। घटना इस प्रकार है:—कुमारी एम०सी० ऐलोरी, अपने पिता के साथ जा एक शहर के मेयर, थे, एक बड़े आलीशान मकान मे रहा करती थी। एक दिन जब वह स्नानागार मे थी, तो कुछ युवक पिस्तौल लिये सब को डराते-धमकाते अन्दर घुस आये। कुमारी ऐलोरी घुडदौड़ मे जाने वाली थी। जब वह नहाकर बाहर निकली तो उन्होंने उसे अपना इरादा बताया और उसे जबर्दस्ती अपनी कार में लेकर चले गये।

इसके बाद डाकुओ ने कुमारी के पिता से १३,००० पाउड माँगे। आखिर ६,००० पाउंड मे उन्होने कुमारी ऐलोरी को पिता के सुपुर्द कर देना मंजूर किया। मेयर की पुत्री ने डाकुओ के चंगुल से छूटने पर पिता से कहा कि उन्होने मुझे बहुत ही अच्छी तरह रक्खा था। डाकुओ के सरदार ने चलते वक्त मेरी बिदाई मे भोज

दिया था। सच तो यह है कि मैं उस युवक को चाहने लगी थी और यदि अब उसे सजा हुई तो उसके लिए सब से अधिक दुःख मुझे होगा। उसके हाथ मे एक खिला हुआ गुलाब का-फूल था जो उसके प्रेमी ने उसे चलते वक्त अपने प्रेम के चिह्न-स्वरूप दिया था।

परन्तु मेयर को तो अपने ६,००० पाउंड वापस पाने थे। उन्होंने पुत्री से जो कुछ मालूम हो सका पूछ कर पुलिस को खबर कर दी, और फिर उसे एक कमरे मे बन्द कर दिया। पुलिस एक दूसरे शहर से उस युवक को गिरफ्तार करके केन्सस ले आयी। मुकदमा पेश होने पर जूरी ने डाकुओं के सामने एक आतंकपूर्ण उदाहरण रखने के लिए उस युवकको को फाँसी की सजा दे दी। अभियुक्त ने अपील भी की, पर कुछ फल न हुआ।

सुना गया था कि युवक की प्रेमिका अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध अपने प्रेमी को छुटाने के लिए दौड़-धूप करती रही थी।

सुनहरे रंग की लूट

'रंग-रूप के कारण मुझे सभी 'सुनहरी' कहते-जानते थे। मैं कैसे कहूँ, पर सच बात तो यह है कि सभी का फतवा था, और निगोड़े आइने का सुबूत कि मेरा रंग तपाये हुए सोने को भी मात देता था। नाक-नक्शा, बनावट-गढ़न, नख-शिख सभी ने मुझे हजारों में एक बना रक्खा था।

'अभी मैं अपने रंगीले पद्रहवें बरस को पार कर रही थी कि होली के ठीक सबेरे मुझे एक नये मादक संसार का पता चला। उसके उन्मादकारी झंझावात की लपेट में पड़कर कहीं-की-कहीं

उड़ कर जा पहुंची। यहां उसके एक अंश की झलक दे रही हूँ
सुनहरे रङ्ग की लूट के प्रारम्भ की कथा।

'मेरे मकान से मिला हुआ मोहनी के पिता का पुश्तैनी घर था। छतें इतनी सटी हुई थीं कि मुरेड़ों पर से हम लोग मजे में उचक-कूद कर एक दूसरे के पास जा पहुँचते। मोहनी मुझसे काफी बड़ी थी। उसकी शादी हो चुकी थी, गौना भी। कई दफे वह ससुराल हो आई थी। इस बार उसका देवर मदन उसे पहुँचाने आया था और होली के कारण रोक लिया गया था। इसके पहले भी वह दो-तीन बार आया था, और मोहल्ले के नाते मेरी ऐसी लड़कियों से हँसी-ठठोली के सिलसिले में उसकी मुठभेड़ हो चुकी थी। वह बहुत ही भोला, संकोची और सीधा था। इस कारण मोहल्ले भर के लड़के-लड़कियों द्वारा उसकी बुरी गत बना करती।

'हमारे शहर में आम तौर पर और हमारे मशहूर मोहल्ले में खास तौर पर होली जरा ज़्यादा जोर की होती है। बहुत ही धूम धड़ाके की, बेहद गंदी, हद दर्जे के फूहड़पन से भरी हुई। धूल-कीचड़, रंग-गुलाल से तबियत ऊब उठाती है, गाली-गलौज, कबीर-फबतियों से कान के कीड़े तक भस्म हो जाते हैं।

मदन भी यही कोई पन्द्रह बसन्तों की बहारें देख सका था पर कसरत और खिलाई-पिलाई, निर्द्वन्द चिन्ता-रहित-मस्ती ने उस के रग-रेशों, कल्ले-पुट्ठों को काफी से ज्यादा लम्बाई-चौड़ाई मुटाई-भराई दे रक्खी थी। सांचे में ढला-सा सुडौल शरीर अठारह से कम का न जँचता था।

'वैसे तो मोहनी के विवाह के समय दो वर्ष पूर्व ही जब मैंने उसे पहले-पहल देखा था, तभी वह मेरी आँखों में बरबस बस गया था। लाख कोशिश करने पर भी पुतलियों के बीच से काढ़े-न-कढ़ता पर इस बार तो मेरा मन उसके लिए बैचैन हो उठा। और.

बार मैंने उसे देखा था सवेरे के धुँधले प्रकाश मे छत पर कसरत करते। वह अपने को अकेला समझ, मौज से लंगोट पहने दंड-बैठक मे मस्त था, दीनदुनिया से बे-खबर, अपने रङ्ग में सरा-बोर। मैं भी यों ही अपनी छत पर आइ थी, एक दम अकेली। बगलवाली छत पर सो-सो की नपी-तुली धुक-धुक सुन कर सहसा आँखे उस ओर जिज्ञासा से फिर गईं। फिर तो जिस दृश्य पर दृष्टि पड़ी, उसने आँखों को, मन को, सर्वस्व को अपनी ओर खींच लिया। पुरुष मे इतना सौंदर्य, इतना सौष्ठव, इतना मादक आकर्षण मेरी आँखो को देखने का अवसर इसके पूर्व कभी प्राप्त न हुआ था। मैं सब कुछ भूल कर मदन के सौंदर्य को एकटक पीने लगी। उस समय मुझे किसी का भान था तो केवल मदन के रूप का, उसके अलौकिक सुगठित अंगों का, उसके रतनारे नयनों का।

'मेरे मन मे, मस्तिष्क मे, शरीर मे कुछ ऐसी बातें हो रही थीं जिन का इसके पहले मुझे कभी स्वप्न मे भी अनुभव न हुआ था। कैसे बतलाऊँ उन सब बातो, उन सब भावो, उन सब चेष्टाओ, उन समस्त क्रियाओ को। शब्दो द्वारा शायद वर्णन करना संभव भी नहीं है।'

'मैं देर तक अपने आपे मे खोई हुई मदन के रूप-सौंदर्य का रसास्वादन करती रही। समय का मुझे भान न रह गया था, इस कारण कह नहीं सकती कि कब तक मैं वहाँ खड़ी चुपचाप मदन को निहारती रही। अन्त मे उसकी कसरत समाप्त हुई। वह इधर-उधर टहलने लगा। इसी समय मेरे हाथ से अन-जाने में एक छोटा गमला छू गया और उसके गिरने की आवाज से इधर मै चोंकी और उधर मदन। उसकी नजर सहसा मुझ पर पड़ी और आश्चर्य-चकित की भाँति उसके मुँह से बेतहाशा

निकल गया—'ओह ! तुम हो !! क्या कर रहीं थीं ? कब से खड़ी थी ?'

'और इधर रूप-रस-मातीं, चकित, चंचल, विस्मय-विस्फारित प्रेमपगीं आँखे सहसा उठीं और मदन की सकोच-विस्मय से परिपूर्ण, सहज-अलस-भाव-भरी उन्मादकारी आँखो से जाकर भिड़ ही तो गईं। और इसके साथ ही बरबस आेठो पर मन्द मुस्कराहट फूट पड़ी, मुख पर लाली फैल गई, अँगों मे कम्पन होने लगा, बदन भर में सनसनी दौड़ गई। लज्जा-संकोच ने आँखो का एक दम नीची होने और शरीर को वहाँ से एकाएक हटा-भगा कर छिपने के लिए विवश किया। किन्तु अनुराग के प्रथम दर्शन-मिलन वाले सर्व-विजयी आत्म-विभोर करने वाले प्रभाव ने मेरे नेत्रो को जहाँ-का-तहाँ उलझा रक्खा, पैरो को जमा-सा दिया, शरीर को गति-हीन कर डाला और मैं धड़कते हृदय को थाम्हे एकटक मदन को निहारती रह गई, नयनों से नयन मिलाये, दीन-दुनिया की सुधि विसराये प्रेम-सागर में सराबोर।'

'शायद मेरे अनन्त, अप्रतिरुद्ध अनुराग का अचूक असर मदन के नेत्र, हृदय, मन, मस्तिष्क पर भी छाये बिना न रह सका। वह भी टहलना चलना छोड़, अपने-पराये की बातो को बिसार कर तन्मय हो निर्निमेष दृष्टि से मेरी ओर ताकता रह गया। उसे भी न तो परिस्थिति का भान रह गया था और न आगे-पीछे के फलो-परिणामो का विचार ही, बस वह था, उसकी अपलक दृष्टि, मै और मेरी जहरीली-कटीली नजर।'

'और अन्तस्तल के सभी गूढ़-गहन भावो को स्पष्ट रूप से व्यक्त-प्रकट करने वाली नयनो की मूक, शब्द-रहित, सूक्ष्म-सम्पूर्ण भाषा मे हम दोनो एक दूसरे के हृद्गत विचारो-भावो को खूब अच्छी तरह से कह-सुन-समझा-बुझा रहे थे। न मेरे मुँह से एक भी शब्द निकला और न मदन की जबान से कोई बात। पर

हम दोनो एक-दूसरे को पूरी तरह से जान समझ गये, बिना कहे ही सब कुछ बतला दिया। नयन-सभाषण का कहीं अन्त ही न जान पड़ता था, तनिक भी सन्तोष न होता था, धारा ही न टूटती थी। और यही लगता था कि इस अमृत-पान का अन्त न हो।

'और हम दोनो का वस चलता तो नयन-मिलन का अन्त होता ही क्यो! पर इस ससार मे भला अधिक समय तक चिन्ता रहित सुख बदा ही किसके भाग्य मे है! हम दोनो प्रेम-लोक के सुखद, आत्म-विभोर करने वाले वातावरण से उछालकर सहसा बाहर फेक दिये गये मोहनी की मधुर, कोमल स्वर-लहरी द्वारा, जो एकाएक दोनों छतो पर आकर गूँज गई थी। मोहिनी मदन को दूध-बादाम के लिए बुला रही थी। मैं तो छलॉग मार कर अपने जीने की सीढ़ियों पर जा पहुंची, जैसे जल पीने वाली मृगी ने पीछे से शेर की दहाड़ सुनकर प्राण बचाने के लिए चौकड़ी भरी हो! और शेर से सीने वाला मदन वही बैठके लगाने लगा। हम दोनो जैसे चोरी करते पकड़े जा रहे हो।

'किन्तु शंका निमूल थी। मोहनी को हमारी स्थिति का पता न चल सका। हम दोनों उसके बाद बराबर लुक-छिप कर एक दूसरे के दर्शन-सम्भाषण का आनन्द अपनी-अपनी छतो से लूटने से न चूकते।

'तीन दिन बड़े मजे मे, बड़ी उमंगो के साथ, मिलन-वियोग के आनन्द-व्यथा मे, नाना प्रकार की रंगीन कल्पनाओ के परो पर लद कर कट गये। चौथे दिन होली जली रात के बारह बजे। मदन को मोहल्ले के लडके खीच ठेल कर होली तापने ले गये थे। वहाँ उसकी जो गत बनी, उससे उसके होश उड़ गये। सबेरा होते ही उसकी क्या दशा होगी, इसकी कल्पना ने ही उसके हृदय को दहला दिया। वह हँसी-मजाक से भागता-चिढ़ता न था। पर होली के नाम पर जो-जो भीषण-वीभत्स बाते होने

की संभावना थी, वे उसे सह्य न थीं। रात में ही घर लौट कर उसने घर वालों से कह दिया कि मैं तो अब एक क्षण भी यहाँ नहीं ठहर सकता। बहुत कहा-सुनी के बाद अन्त मे यह ठहरा कि वह चुप-चाप एक कमरे में बन्द पड़ा रहे, घर वाले सबसे कह दे कि वह चला गया, और इस प्रकार होली के नाम पर होने वाली फजीहत से उसकी रक्षा की जाय। रात से ही मदन छत वाले कमरे मे जा छिपा। ज़ीने के और आस-पास के सारे रास्ते उसने बन्द कर लिये।'

'अभी उजेला होने भी न पाया था, कि हुल्लड़, गुल-गपाड़ा शुरू हो गया। मदन के लिये दल के दल धावे बोल रहे थे, पर सभी को निराश होना पड़ा मुझे भी चैन कहाँ! दबे पाँवो छत पर मँडराने लगी। मदन भी चौकन्ना था। होली की गत से बचने और मुझसे चार नजरे करने के लिए वह सतर्क था, व्याकुल था। मेरा छत पर आना उससे छिपा न रह सका। टोह लेकर वह उस ओर आया जिस ओर मै दबको खड़ी थी। पास आने पर मैंने धीरे से हँस कर कहा—'खूब चोर बने हो! अभी मोहल्ले वालो को पता चल जाये तो तुम्हारे ऐसे परदे-की-बू-बू.... ।'

'उसने भी हँस कर कहा—वैसे महल्ले के सारे छोकरे मेरा कुछ ज्यादा बिगाड़ नहीं सकते। पर मै धूल-कीचड़-गलीज़ और कोयले-कोलतार-काजल से घबरा जाता हूँ। व्यर्थ मे कपड़ो और बदन की दुर्दशा मुझ अच्छा नही लगता। और इस चिल्ल-पों, गाली-गलौज, बेशर्मी के भांड़पन को तो तुम भी न पसन्द करोगी।'

'इसी समय गंदी-से-गंदी गालियो की बौछार हमारे मकानों के सामने ही होने लगी। मेरी आँखे मदन की आँखो से उलझी हुई थीं। बौछार के कान मे पड़ते ही अपने-आप मेरी नजर

नीची हो गई। शर्म ने अधमरी कर डाला। मदन भी मुस्करा कर तनिक हट गया। मुझे खुशी इस बात की थी कि कई घंटे मदन को अपने-आप स्वीकार की गई इस तनहाई की सजा को भोगना पड़ेगा और इन कुछ घंटो में मैं उससे दिल खोल कर मिल बोल सकूंगी. कोई विघ्न-बाधा डालने वाला न आ सकेगा। मैं रहूँगी और मदन।'

'मदन के कमरती शरीर को खाने की जरूरत थी। और मैं जानती थी कि न तो रात की उत्तेजना मे इसका उसे ख्याल ही रहा और न होली के मद मे मदहोश घरवालों का ध्यान ही इस ओर जल्दी जा सकेगा। मैं कुछ मेवा-मिठाई लाई। मदन ने जिद पकडी कि दोनों साथ ही खायेंगे। हार कर मुझे उसके कमरे मे जाना पड़ा। मजा भी आ रहा था। और झिझक भी हो रही थी। छतों पर से दूर-दूर से तो रोज ही बाते होतीं, पर इतने समीप आने का मेरा यह पहला ही अवसर था। बदन भर मे सनसनी दौड़ जाती, हृदय जोर-जोर से धड़कने लगता, गुदगुदी-सी उठती। मन मे पुलक भी उठती और भय-सा भी लगता। कभी मन आगे बढ़ता-बढ़ाता तो पैर सौ-सौ मन के भार से ऐसे जकड़ से जाते कि आगे एक अंगुल न बढ़ा जाता। और कभी पैर जल्दी-जल्दी उठने लगते तो मन पीछे की ओर मुड़ कर भागना चाहता। आँखें खुशी से नाच-सी उठतीं और फिर दूसरे ही क्षण भय-शंका से चंचल हो चारों ओर टोह लेने के लिए घूम जातीं और लज्जा-संकोच के कारण जमीन मे गड़-सी जाना चाहतीं। उमंग से चहकने, गुनगुनाने, सुरीली तान छेड़ने के लिए कंठ बेचैन होने लगता; पर साथ ही कोई सुन न ले, आहट न पा जाये इस आशंका से मुँह से आवाज तक न निकलना चाहती। ओंठों पर बरबस मुस्कराहट

फूटने लगती, और दूसरे ही क्षण उन्हीं ओठो को दॉत काटने लगते।'

'अजीब हालत थी उस समय मेरे मन, मस्तिष्क और शरीर के अंगो की।'

"यह सब कुछ मेरी समझ मे न आ रहा था। इसके पहले ऐसा अनोखा अनुभव मुझे कभी स्वप्न मे भी न हुआ था। अच्छा भी लगता और भय से बुरा हाल भी हो जाता।'

'पर अन्त में मैंने अपने को मदन के पास, उसके कमरे मे पाया। वह मेरे दोनो हाथो को अपने हाथों मे लिये हुए, मेरी ऑखों मे ऑखे डाले मुस्करा रहा था। उसके संपर्क के नशे ने मेरे ऊपर जादू डालना शुरु किया। धीरे-धीरे मै भी भय-शका-लज्जा-संकोच से मुक्त हो खुल-खिल कर प्रेम-दृष्टि, प्रेम-संलाप, प्रेम-प्रदर्शन का आदान-प्रदान करने लगी। उसने मुझे अपने हाथो से खिलाया-पिलाया और मैंने उसे। हौले-हौले, अनजाने, बिना-समझे मैं एक दम उससे बिल्कुल सठ कर बैठी थी। बाते जारी थीं। क्या और कैसी, इसका मुझे न तब पता था और न अब ध्यान ही है। केवल इतना भान तब भी था कि मदन कुछ बहुत ही मीठी-मीठी, मन लुभाने वाली, आकर्षक बाते कह रहा था, और इस समय भी उनकी सुखद-मादक स्मृति से विभार हो उठती हूँ। मैं भी हँस-मुस्करा कर उससे कुछ कहती जाती थी और वह भी ऐसा भाव दिखला कर मेरी उन बातो को सुन रहा था जैसे कानों में मादक संगीत की लहर जा रही हो, जैसे मन मे मिश्री घुल रही हो, मन-प्राणो में अमृत की वर्षा हो रही हो। हम दोनो एक दूसरे के संपर्क-संलाप-संसर्ग की मादक धारा में पूरी तरह से सराबोर थे।'

'इसी समय चुनी-चुनी गालियों के आलाप से दशो दिशाएँ गूंज उठीं। बातें एक दम सीधी-सीधी, साफ-साफ थीं। कोई

कोर सकर बाकी न रक्खी गई थी, लगी-लिपटी के लिए गुंजाइश ही न रह गई थी। और यह काण्ड देर तक चलता रहा। शायद मीलो दूर रहने वाले भी इन शुभ-शब्दों से अपने कानो, अपने मन, अपनी आत्मा को बचा न सकते थे।'

'मै भी विवश होकर सुनती रही और मदन भी। प्रेम के प्रथम उन्माद मे हम दीन-दुनिया को भूल गये थे, पर उन गरमा-गरम शब्दो ने हमे सचेत कर दिया, अपने दाहक प्रभाव मे लपेट लिया। कुछ देर लगातार उस जहर को पीते रहने के बाद मदन ने एक विशेष ढंग से मेरी ओर देखा, खास तौर पर मेरे अंगों का स्पर्श किया। और मैं... .मै भी उस समय अपने-आपे-मे न रह सकी। मेरी आँखो मे भी कुछ खास बातें थीं, अंग विशेष चेष्टा से भरपूर थे, मन अनोखी चाह से, सुखद प्यास से उमड़ रहा था।'

'गालियो का जोर बढ़ रहा था, उनमे तेजी आरही थी, और इधर हम दोनो के मन, मस्तिष्क, शरीर बेकाबू हो रहे थे। और अन्त मे......'

कह नही सकती कि कितना समय बीता। मैं एक प्रकार से बिल्कुल बेहोश-सी थी। और अपने-आप शायद मै होश मे आती भी न, संभवतः खुद होश मे आ भी न सकती थी। सहसा जीने के किवाड़ो के पीटे जाने की ध्वनि ने हम दोनो को चौका दिया। मोहिनी मदन को पुकार रही थी। मै तड़प कर मदन की गोद से उठी और किसी तरह भाग कर अपनी छत से होती हुई अपने जीने के बीच जा पहुँची।'

'अब मुझे समय का, परिस्थिति का ख्याल आया। दोपहर ढल-चुका था। एक बज चुका था। होली का हुल्लड़ कम पड़ गया था, समाप्त-सा हो गया था। मोहनी के सर और शरीर ने अपनी भावजो-हमजोलियों के रङ्गो से बार-बार तर होकर शान्ति प्राप्त

की थी और अब उसे कैद में घुसे हुए मदन की याद आई थी। और मुझे याद आई दीन-दुनिया की।'

'उस मिलन ने मेरी प्यास को बहुत ज्यादा उभाड़ दिया। मदन से खुल कर मिलने के वैसे कम ही अवसर मिलते। और इसी कारण लुक-छिप कर जो रस की बूँदें पा जाती, उनसे अग्नि में घृत पड़ने का ही असर होता, मैं दिन-दिन बेजार होती गई।'

'और जब मदन गया, तो मैं उसके साथ थी। मोहल्ले में क्या, शहर भर में और शहर के आस-पास के स्थानों तक में तहलका मच गया। मदन दूसरी जाति का था और मैं बिलकुल दूसरे जमात की। विवाह का सवाल ही नहीं उठ सकता था। उठाया भी जाता तो दोनों ओर के बड़े-बूढ़ों के राजी होने की संभावना क़यामत तक न थी। ऐसी हालत में सिर्फ दो बातें थीं, या तो जिन्दगी भर मदन के लिये आहें भरते हुए तन किसी दूसरे के सिपुर्द करना, अथवा जात-जमात, घर-द्वार, माँ-बाप को हमेशा के लिये छोड़ कर चुपके-चुपके मदन का पल्लू पकड़ना और जो भी सामाजिक बिस्फोट हो, उसे सहन करने के लिए तैयार होना।'

'मैंने पिछला रास्ता पकड़ा। मदन की हिम्मत न पड़ती थी। पर मैं कब छोड़ने वाली थी। ठोक-पीट कर अन्त में मैंने उसे राजी कर ही लिया। और हम दोनों वहाँ से हवा हो गये।

'हमारे नाम वारण्ट निकलवाये गये, सर-गरमी से खोज-ढूँढ़ की जाने लगी, मुस्तैदी से जासूस पीछा करने लगे। जान लेकर भागना कठिन हो गया। मुझे अपने लिये तो भय था ही, ज्यादा दहशत थी मदन की हिफाजत के लिए। असल में मैं मदन को लेकर भागी थी, उसे मजबूर करके, उसकी मर्जी के खिलाफ। किन्तु दुनिया में यही बात फैलाई गई कि मदन ही

मुझे—एक नन्ही, अबोध बालिका को फुसला-बहका कर ले भागा है, जात-जमात को नीचा दिखलाने के मकसद से ही। बस, फिर क्या था। बवंडर खड़ा कर दिया गया। और जात-जमात के सभी छोटे-बड़े एक हो कर अपनी इस बेइज्जती का बदला लेने के लिए तुल गये।

'मदन के और मोहिनी के घर वालों ने डर कर कन्धे डाल दिये। मदन को अपने बड़े भाई का बड़ा भरोसा था। पर उन्होंने कोरा जवाब दे दिया। किन्तु मेरी जात-जमात वालो के जोश-खरोश ने मदन की जात-जमात वालों को ठोकरें मार कर उकसा-दिया। कुछ माई के लाल हमारी रक्षा के लिए तैयार हो गये, ज्यादातर मेरी सुनहली रंगत के सबब से पिघल कर, ललचा कर, मुझसे खास उम्मीदें बाँध कर ही। आज कई बरस बीत गये। मेरे एक नन्हीं सी लड़की हो चुकी है, एक दम जापानी गुड़िया-सी ही। पर वह किसके अंश से है, इसे मैं, उसको जन्म देने वाली माँ होकर भी ठीक-ठीक नहीं बतला सकती। और इसका कारण है, हमारे उपकारी सहायकों की कृपा। उनमें के ज्यादातर मेरे सुनहले रंग और भोली सूरत के लालच को रोक न सके, और उन्होंने केवल अपनी इच्छाओं की पूर्ति के उद्देश्य से ही हमें आश्रय देना, गिरफ्तारी से हमें बचाने के लिए छिपा रखना उचित समझा था। उस बेबसी की हालत में वे किसी न किसी बहाने मदन को टाल देते और डरा-धमका कर, फुसला-बहला कर, धोखा देकर मुझे अपने सुनहले रङ्ग को दागी करने के लिये मजबूर करते। अपने और मदन प्राणों की रक्षा के विचार से मन न रहने पर भी मुझे विवश होना पड़ता, केवल स्थिति के कारण। 'आज हम गिरफ्तारी से बचे तो हैं, पर मैं अपने को साफ अछूता न रख सकी, इसका मुझे बहुत ही अधिक क्लेश है।'

कुल-नाशक सती

"सती की जय;" "माता सती की जय," "सती देवी की जय" के नारों से वायुमण्डल गूँज रहा था। पाँच छः हजार कट्टर श्रद्धालुओं के कंठों से निकली हुई जय ध्वनि मीलों तक गूँज उठती थी अटूट श्रद्धा, अनन्त अंध-विश्वास, कट्टर धार्मिक भावना और भावनामय भोली भक्ति की बाढ़-सी आ रही थी। एक अर्थी थी, उसपर एक म्लान-मुख वाली सुन्दरी, सुकुमारी युवती बैठी थी। हजारों भोले-भाले गाँव वाले उसे अगाध धार्मिक उफान के साथ गगा के तीर स्मशान घाट की ओर ले जा रहे थे। इसी समय सदल-बल पुलिस वालों ने आकर जुलूस को रोकने और उस युवती को गाँव में वापस ले जाने की चेष्टा की। पुलिस अफसर ने यह समझाने की लाख चेष्टा की कि कानूनन सती होना बन्द कर दिया गया है, सती होने मे सहायता देना जुर्म करार दे दिया गया है; किन्तु कट्टर अंध-विश्वासी, धार्मिक जोश से मतवाले पांच-छः हजार गाँववालों के समने कुछ इने-गिने पुलिस वालों की एक न चली। और जब तक पुलिस वाले अपनी सख्या बढ़ावें और जिलाधीश को इत्तिला कर उसे घटना-स्थल पर लावें, तब तक मे जुलूस स्मशान घाट पर जा पहुंचा और सती होने का क्रम चल पड़ा। युवती का नाम सम्पति कुँवर था। उसने विधि पूर्वक स्नान कर सोलहों शृंगार किये, अच्छे वस्त्र पहने, पैरों मे महावर लगाया, माँग मे सिंदूर भरा और फिर चिता पर अपने पति सिद्धेश्वर के शव के साथ जा बैठी। उसके चिता पर बैठते ही अग्नि देव प्रकट हो गये। जय ध्वनि से आकाश काँपने लगा। किन्तु जैसे-जैसे अग्नि की ज्वाला मे तीव्रता आने लगी, वैसे-ही-वैसे चिता पर बैठी सती के भाव में परिवर्तन होता गया। अन्त

मे जब चिता की अग्नि अधिक प्रचंड हो गई और युवती के अंग जलने लगे तब, वह और अधिक सहन न कर सकी। उसके देवर तथा अन्य संबंधी उसके भावो को देख-समझ कर चिंतित, व्याकुल हो रहे थे। मृत पुरुष के भाइयो तथा सबधियो ने विधवा सम्पति कुंवर को सती बनाकर अपने कुल के नाम को अमर करने की लालसा से ही यह सब आयोजन किया था, जब चिता पर बैठी हुई सती चिता की ज्वाला से व्याकुल होकर हटने की चेष्टा करने लगी तब तो मृत पुरुष के भाइयो को अपने कुल के नाम मे कलंक लगने की आशंका ने व्याकुल कर डाला। उन्होंने बड़ी कोशिश की कि सती चिता पर ही बैठे-बैठे भस्म हो जाय, पर उनकी सारी चेष्टाएँ निष्फल हुई समस्त उपाय व्यर्थ गये। जो लोग अभी तक 'सती माता की जय' के नारे लगा रहे थे, अब वे ही कुछ दूसरे तरह के शब्द बकने लगे। उन सब ने देखा कि आग की आँच और अधिक न सह सकने के कारण सम्पति कुंवर छलांग मार कर चिता से नीचे कूदी और इस के पहले कि कोई उसे रोक या पकड़ सके वह अपने शरीर के जलते हुए अंगो को शीतल करने के लिए गंगा की धारा मे कूद गई। लोग क्रोध-क्षोभ से बौखला उठे। पहले तो उन्होंने यह चेष्टा की कि सम्पति को जैसे भी हो फिर चिता पर चढ़ा कर सती बना दे, किन्तु जब वे इस में सफल न हो सके तब मृत व्यक्ति के भाइयो ने अध जले शव को ही चिता से निकाल कर गंगा की धारा मे सम्पति के ऊपर फेंक दिया और वे सब चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगे कि तू कुलटा है, कुल-कलंकिनी है, असती है, भ्रष्टा है; अब तेरे गंगा मे डूबकर मर जाने में ही कल्याण है। किन्तु इसमे भी उन्हें सफलता न मिली। इसी समय वहाँ सशस्त्र पुलिस के साथ जिलाधीश के आ जाने से सारा मामला ही उलट गया, जिलाधीश ने अधजली युवती सम्पति कुंवर को गंगा की धारा से निकलवाया और उसे

इलाज के लिए भिजवाया, किन्तु वह इतनी अधिक जल गई थी कि दो दिन बाद तड़प-तड़प कर उसने प्राण दे दिये। मामला दूसरा रंग पकड़ गया। पटना की सरकारी अदालत में मुकदमा चला। सेशन जज के सामने जो सुबूत पेश हुए उनका सारांश इस प्रकार है :—

ता० २१ नवम्बर सन् १६२७ की रात में सिद्धेश्वर नामक एक उच्च कुल का व्यक्ति लम्बी बीमारी के बाद मर गया। मृत व्यक्ति के भाइयों तथा अन्य संबंधियों ने अपने कुल के नाम को उजागर करने के विचार से यह निश्चय किया कि मृत व्यक्ति की स्त्री सती हो जाये। मृत व्यक्ति की स्त्री का नाम सम्पति कुँवर था। सम्पति अभी पूरी युवती भी न हो पाई थी कि उसके माथे का सिन्दूर पुँछ गया। उसे पति से या पति के कुटुम्बियों से वैसा कुछ सुख-संतोष भी प्राप्त न हो सका था। लोगों के जोर डालने और समझाने से विधवा सती होने के लिए तैयार हो गई। जिस समय सम्पति का पति मरा था उस समय सम्पति का भाई मुरलीधर और उसके मायके से आई हुई लखिया कहारिन, दोनों वहाँ मौजूद थे। मुरलीधर की उम्र यही कोई १६-१७ बरस की थी। पहले तो ये दोनों सम्पति के सती होने के पक्ष में न थे, पर जब उन्हें भी समझाया गया कि सती होने से सती के माता-पिता के सात पीढ़ी वालों को स्वर्ग मिलता है और सती तो साक्षात् लक्ष्मीदेवी का अवतार धारण कर लेती है, तब धार्मिक भावना के कारण उन दोनों ने भी विशेष कुछ आपति न की। नतीजा यह हुआ कि २२ तारीख को ब्रह्म मुहूर्त में ही सिद्धेश्वर के शव के साथ सम्पति को उसके भाई-बन्धु सती होने के लिए गंगा किनारे स्मशान घाट ले गये। पहले यह बात ज्यादा न फैलने पाई थी, घर वाले यही कोई सोलह आदमी अर्थी को ले जा रहे थे। किन्तु स्मशान घाट पहुँचने के पहले ही पुलिस वालों

को पता चल गया और उन्होने सिद्धेश्वर के भाइयो को यह समझा दिया कि अँगरेजी राज्य में सती होना कानून के खिलाफ है। लोग उस समय पुलिस की बात मान गये। सम्पति कुँवर को उन्होंने एक किराये के इक्के पर बैठाल कर उसके भाई मुरलीधर के साथ उसके मायके बरना भेज दिया और मुर्दे की अर्थी को लेकर वे सब स्मशान घाट की ओर चल पड़े। पुलिस भी लौट गई। पुलिस के जाते ही मृत सिद्धेश्वर के भाइयों ने यह तय किया कि सम्पति कुँवर को तो सती होना ही पड़ेगा। इस निर्णय के अनुसार सिद्धेश्वर का छोटा भाई विद्यासागर दूसरे रास्ते से गया और धोखा देकर सम्पति कुँवर को फिर घाट की ओर लौटा लाया। सम्पति फिर अपने पति के शव के साथ कर दी गई और फिर "सती देवी की जय" के नारे लगने लगे। इसी बीच में आस पास के लोगों को सती होने की बात का पता चला, धार्मिक जोश में लोग दौड़े आये। देखते-देखते दर्शकों की संख्या पाँच हजार से भी ऊपर हो गई। और अन्त में जो घटना घटी उसका वर्णन ऊपर दिया ही जा चुका है।

जोर-शोर से मुकदमा चला। सिद्धेश्वर के भाइयों की ओर से उस समय के कलकत्ते के सबसे बड़े वकील मि० आई० ई० पग तथा पटना हाईकोर्ट के सुप्रसिद्ध कानूनदां श्रीकाशीप्रसाद जायसवाल आदि पैरवी करने के लिये खड़े किये गये। पहले मामला सेशनजज के सामने आया। बहस-मुबाहसे के बाद जुरी ने अभियुक्तों को निर्दोष बतलाया। किन्तु अदालत ने सिद्धेश्वर के भाई विद्यासागर, लछमन आदि के संबंध में जुरी की राय को मंजूर नहीं किया और मामले को हाईकोर्ट के सामने उपस्थित कर दिया। पटना हाईकोर्ट में भी मुकदमा और भी सनसनीदार हो उठा जजों ने फैसला दिया कि जुरी वाले सज्जन विद्वान तो थे, विद्वत्ता से न तो मनुष्य में बुद्धिमानी आती और न साहस ही

और जुरी ने इस मामले में जिस नीति रीति से काम लिया है उससे स्पष्ट है कि पढ़े लिखे होते हुए भी सामाजिक मामलों मे समाज की रूढ़ियो, अंधविश्वासों के विरुद्ध आवाज उठाने की उनको हिम्मत नहीं पड़ सकी। अभियुक्तों को छुड़ाने की बड़ी-बड़ी कोशिशें की गई, बड़े-से-बड़े वकीलों बैरिस्टरों ने अपनी सारी कानूनी लियाकत और भाषण की शक्ति लगा दी, किन्तु हाईकोर्ट ने यही फैसला दिया कि मृत व्यक्ति के भाई-बन्धुओं ने अपने कुल के नाम को धार्मिक-सामाजिक रूप से प्रसिद्ध करने और पुण्य लूटने की लालसा से विधवा युवती सम्पति कुँअर को स्वर्ग-सुख के सब्ज बाग दिखला कर तथा अन्य उपायो द्वारा सती होने के लिए तैयार कर लिया, और इस संबंध में जो भीषण घटनाएँ घटी उनसे स्पष्ट है कि सम्पति कुँवर को आत्म-घात करने के लिए मजबूर किया तथा आत्मघात के प्रयत्न मे छल बल कौशल से योग दिया। चिता मे आग लगने मे भी छल से काम लिया गया। हाईकोर्ट ने दो को पाँच-पाँच वर्ष और पाँच अभियुक्तों को दस-दस वर्ष की सख्त कैद की सजा दी गई। इस प्रकार इस सती काण्ड से कुल का कुल नष्ट प्राय हो गया।

पति-प्रेमिका कुलटा

अदालत के सामने उसने रोते-सिसकते हुए जो सच-सच बयान दिया, उसे सुन कर जज जूरी और वहाँ उपस्थित अन्य सभी छोटे बड़े उसके प्रति सदय हो उठे। उसने अपनी पत्नी का

बध किया था, उसके गले को बाल बनाने वाले ब्लेड की नन्हीं-पतली धार से रेत-रेत कर घंटे-सवा घंटे मे काटा था। और वह भी अपनी प्रिय पत्नी की सलाह से ही, उसके बहुत कहने, बेहद जिद करने पर ही। और जब उस जवान खूबसूरत स्त्री का नाजुक-सुबुक गला आधा कट गया, तब उसने अपने प्यारे पति से अन्तिम प्यार चाहा, उसने आखिरी बार खुद अपने ओंठों से प्रिय पति को बार-बार चूमा और उसके गले में अपने कोमल हाथों को डाल कर अपने गल को रेतनेवाले प्रेमी घातक पति का भर पूर आलिंगन दिया। और इस सब प्रेम-प्रदर्शन के बाद उसने फिर उसी पति से अपने बचे हुए गले का रेत-रेत कर काटने को मजबूर किया। उन दोनों पति-पत्नी मे प्रगाढ़ प्रेम था, असाधारण स्नेह। और इसी अपूर्व प्रेम-प्रणय के कारण पत्नी ने अपने पति को इस बात के लिए मजबूर कर दिया कि वह अपने हाथों अपनी उसी प्रिय पत्नी का गला रेत-रेत कर काट डाले. ताकि वह (स्त्री) उसी स्नेही पति की गोद में तड़प-तड़प कर अपने प्राण दे सके। कैसा अजीब था यह मामला! कैसी विचित्र थी दोनो की लगन, कैसा अनोखा था यह स्वार्थपूर्ण सवस्व त्याग! कितनी असाधारण थी यह प्राण-विसर्जनी प्रणय-लीला!! और अदालत में सबको यह जान कर सबसे ज्यादा ताज्जुब हुआ कि वह स्त्री अपने पति को प्राणों से भी ज्यादा प्यार करती थी, पर थी वह कुलटा, एकदम बदचलन, पर-पुरुष से संबंध रखने वाली!! कैसी असभव लीला थी यह पति पर प्राण निछावर करने वाली स्त्री भी जान-समझकर, प्रेमी पति के रहते हुए भी व्यभिचार कर और फिर उसी के प्रायश्चित स्वरूप अपना गला हँसते हँसते रेता ले, इतनी भीषण पीड़ा को बिना चूँ किये चुपचाप सह ले!! अदालत अवाक् थी, लोग सन्नाटे म आ गये थे। कैसा परस्पर विरोधी भीषण काण्ड था।

अदालत के सामने जो बातें आई वे इस प्रकार हैं:—
अबदुल्ला एक मामूली हैसियत का नौजवान था वह मामूली-सा काम करके अपनी गुजर चलाता था। उसके एक दूर के रिश्तेदार के फातिमा नाम की एक बेहद खूबसूरत लड़की थी। छुटपन से ही जब कभी वह अपने उस रिश्तेदार के यहाँ, या उसके गाँव घर के पास-पड़ोस मे जाता, तब फातिमा से जरूर मिलता। अबदुल्ला ने जो बयान दिया वह इस प्रकार है:—

'फातिमा की हँसी, उसकी कोयल-सी कूकें, मुरली-सी बानी मेरे कानो मे गूँजती रहती; मेरे दिल में गुदगुदी पैदा करती रहती। उसके दूध से सफेद, सुन्दर, चमकीले आबदार, सुघड़ दाँतो की पाँत के लाल-लाल ओंठो के बीच बात करते या हँसते वक्त ऐसे चमक उठते, इस तरह से खिल जाते कि मेरी आँखों मे मेरे अन्तस मे चकाचौध पैदा हो जाती, मैं महीनों उस बाँकी छटा की मन-हर झाँकी अपने आप अपने दिल के आइने मे अनायास देखा करता। और सबसे गजब की थी उसकी गोल-बेहद बड़ी-बड़ी रसीली-चमकीली चंचल, मारू आँखे जो सैकड़ो मे ही नहीं, हज़ारों मे बल्कि लाखों में भी उसे एकता साबित कर सकती थीं। और असल में इन्हीं असाधारण बड़ी-बड़ी मारू-मोहक आँखों ने ही मुझे उसकी ओर आकृष्ट कर दिया था। वह दिन भी क्या भुलाया जा सकता है। मैं एक बारात के सिलसिले मे फातिमा के गाँव मे गया था। हम दोनों की रिश्तेदारी मे शादी थी। वह बारह बरस की नवेली छोकरी थी और मैं बारह-चौदह बरस का अलल बछेड़ा। दोनों ही हवा के घोड़ों पर सवार रहते। सीधे चलना, मजे से पैर उठाना तो हम जानते ही न थे। मैं भी काम मे मदद दे रहा था, दौड़-दौड़ कर, और फातिमा भी हाथ बँटा रही थी उछल-फुदक कर। एक बार उसने लकड़ी उठा [illegible] कर कूदी की

मटकी में जा लगी। और इसके पहले कि मै संभलू-सरकू, हॉडी फूट कर लुढ़क चुकी थी और सारी कढ़ी मेरे माथे-मुँह को सराबोर करती मेरे सारे बदन पर बिखर-बह कर मुझे बसन्ती-बन्दर बना चुकी थी। गरमा गरम कढ़ी से मैं सर-से-पैर तक उबल उठा था। और जब दूसरे ही क्षण मैं उचकता-लुढ़कता-कूदता-कराहता तनिक संभला, तो मेरी खून-सी सुर्ख आँखें जिस पहली चीज पर पड़ी वह था फातिमा का डर-घबराहट-क्षोभ-सकपकाहट से भरा हुआ, आश्चर्य से विकृत-विस्मित कुम्हलाया-मुरझाया चेहरा। और उस चेहरे पर थी दो बेहद बड़ी-बड़ी सुर्ख, गाल, बहुत ज्यादा फैली हुई आँखे। ऐसी आँखे जिनकी असाधारण लम्बाई-गुलाई बिना जादू का-सा असर किये मान ही नहीं सकतीं। और फिर वह मौका था उन गैर-मामूल बेहद बड़ी आँखो को ताज्जुब से और भी ज्यादा फैला कर बड़ी कर देने का। उन आँखो पर मेरी आँखो के पड़ते ही मैं अपनी सारी बाते भूल गया। गरम कढ़ी से जलना-सराबोर होना, उस की तकलीफ से होने वाली बेचैनी आदि सभी मेरे दिमाग से उड़न-छू हो गई।

'खट्टी कढ़ी की जलन शान्त होने मे कुछ दिन जरूर लगे। किन्तु जलन-कुढ़न के उन दिनो मे मुझे सुनयना, मृगलोचनी, अनियारे आँखो वाली फातिमा की सकोच, लज्जा, क्षोभ, मोह, ममता, सहानुभूति भारी तिरछी-तेज-चचल चितवन की जो मधुर मोहक मरहम दिन मे कई बार प्राप्त हो जाती थी, उससे ऊपरी जलन तो एकदम भूल-सी जाती थी, पर उसी चितवन की मीठी-मजेदार-तीखी-पेनी काट से हृदय मे एक नया मधुर टीस वाला घाव हो गया। मजा तो यह था कि मीठा दर्द देने वाली उसकी कटीली-रसीली नजर की तिलमिला देने वाली चोट के लिए मैं बराबर बेचैन रहने लगा। और मुझे अनजाने मे अपने अल्हड़पन

के सबब से कढ़ी की केसरिया जलन से तड़पाने के कारण नचनी गुड़िया फातिमा के दिल मे भी मेरी तरफ खिंचाव-लगाव पैदा हो गया था। पहले तो वह दूर से मेरी तबियत का हाल पूछ-जान कर मधुर मुस्कान के साथ आँखे नचाती मटकती-मचलती हुई फुर्र से उड़ जाती। किन्तु फिर जल्दी ही वह कुछ ज्यादा परचने लगी। जरा ज्यादा नजदीक आकर खड़ी होने लगी, अपनी सुरीली आवाज में मेरी हालत पूछने और दो-एक इधर-उधर की बातें करने लगी। लेकिन मुह उसका ज्यादातर टेढ़-टेढ़ा ही रहता, नजर तिरछी हो पड़ती, देखती भी तो आँखों की कोरो से ही। मुस्कुराहट दबाने की बेहद कोशिश करती, पर बर बस ओठ खुल ही जाते, आबदार दाँत चमक ही पड़ते, आँखें अपने-आप चंचल हो नाच-थिरक उठती। और सुन्दरी गुड़िया फातिमा बात कहते-कहते बिना पूरी किये भट से भाग खड़ी होती

'और ये छड़क-भिभक के आकर्षक-मोहक दिन भी जल्दी ही बीत गये। पंछी ज्यादा परच गया। उसे पास बैठ कर घन्टों बेसिर-पैर की बातें करने, तरह-तरह के अजीब बेमतलब के सवाल पूछने और उनके जवाब सुनने के पहले ही अपने-आप फुत्र से कुछ कह सुनाने मे अघाव ही न होता था। खट्टी कढ़ी के गरमागरम स्नान ने जैसे हमारे बीच के अलगाव और मल को एक दम साफ कर दिया हो। मौके निकाल हम दोनों एक दूसरे की बाहो में जकड़े देर-देर तक यही सोचते-कहते-सुनते रहते कि अगर एक बार फिर गरम कढ़ी का स्नान हो जाता और मुझे वहाँ कुछ दिन और रुकना पड़ता तो कितना अच्छा होता। जैसे-जैसे मेरी ऊपरी जलन कम होती गई, वैसे-ही-वैसे हम दोनों के दिलों की जलन बराबर बढ़ती ही गई।

'अन्त में वह भीषण दिन भी आया जब मुझे वहाँ से कूच करना पड़ा। कितना विषादपूर्ण था वह समय। पहले से ही हम

दोनों बिलख-बिलख कर रो रहे थे, पर विवश थे। देर तक एक दूसर के कंधों पर सर रक्खे रोते-सिसिकते रहने के बाद आखिर हम दोनों अलग हुए। पर जाने के पहले हमने आपस मे तय कर लिया था कि जिन्दगी जैसे भी होगी एक साथ ही बिताएंगे। फातिमा तो मेरे साथ उसी दम चलने के लिए तैयार थी, किन्तु हमने यही सोचा कि अगर सीधे से हमारे घर वाले शादी करने के लिए राजी हो गये, तब तो ठीक ही है, भागने-उड़जाने की जरूरत ही न पड़ेगी, लेकिन अगर घर वाले बड़े-बूढ़े राजी न हुए तो जैसे भी होगा हम दोनो एक हो कर रहेंगे, साथ-साथ जयें-मरेंगे।

'समय बीता। हम दोनों तनिक और भी सयाने हुए। लोगों को हमारी लगन की बातो का भी खुलकर पता चला। बड़ी-बड़ी बातें हुईं, भारी-भारी विघ्न पड़े, लोगों ने न जाने कितनी-कितनी शैतानियाँ कीं, भाँजी मारने मे कोई कोर-कसर न रक्खी, पर अन्त मे हम दोनो की लगन, हठ और कुछ भी कर गुजरने की धमकी ने मामला ठीक कर दिया। शादी तय हो गई। जिस दिन मैं नौशे बनकर बारात लेकर बनरी फातिमा के घर के सामने पहुंचा, उस घड़ी मेरे दिल मे कैसे-कैसे भाव उमड़-घुमड़ रहे थे, उनका मैं किन शब्दो में वर्णन करूँ। वैसे इसके पहले मैं चोरी-चोरी फातिका से सैकड़ों दफा मिल चुका था, बीसियों बार हम एक दूसरे को निहाल-बहाल कर चुके थे, हजारो प्रेम-प्रदर्शन होकर रहे थे, और उन अवसरो पर जो रस-वर्षा हुई थी उसकी मिठास, उसके मादक प्रभाव का तो कहना ही क्या है। सब की नजरो को बचाकर चोरी-चोरी मिलते समय कई बार बबूल और नागफनी के पैने काँटे हमारे पैरो के तलवों और कोमल अंगों में धँस कर टूट-टूट गये थे, किन्तु हमे उस समय उनकी तनिक भी पीड़ा या परवाह न हुई। अनेक गहरी-करारी चोटे लगीं, पर उन के दर्द का

वैसा हमे भान तक नहीं हुआ। बस मिलन-सुख के महासागर मे हमारी और सभी पाड़ाएँ डूब कर वह गईं। उन अवसरो पर एक दूसरे के क्षणिक सुखद सहवास-संभाषण-स्नेह प्रदर्शन के आगे ससार के किसी भी संकट का हम दोनों कुछ भी न समझते थे। यह सब हो चुका था, पर अब इस अवसर पर जब मैं दूल्हा बनकर अपनी उसी प्राणाधार फातिमा का सब के सामने, खुले खजाने अपनाने जा रहा था, तब जिस सुख, संतोष, गर्व आनन्द का अनुभव मैं कर रहा था, उसका वर्णन तो शब्दों द्वारा किया ही नहीं जा सकता। आज सभी विघ्न-बाधाओं का अन्त होने जा रहा था। जिस फातिमा को देखने के लिए मुझे तरह-तरह के उपाय करने पड़ते, ससार के भीषण आक्रमण का सामना करने के लिए तैयार होना पड़ता उसी का आज मैं सब तरह से खुलकर अपनी कह सकूंगा। कितना सुख का था वह दिन।

'खुशी-खुशी शादी हो गई। सारी रस्मे अदा कर दी गईं। मैं अपनी फातिका को विदा कराकर अपने घर ले आया। कितने मौज की थी वह रात!

'लेकिन शायद हमारे सुख को संसार सहन करने की शक्ति न रखता था। हमारे भाग्यो मे अधिक दिन एक दूसरे का सहवास बदा न था। तकदीर फूट गई थी। सुख के दिन ज्याद न चल सके। मुझे अड़ोस-पड़ौस वालों से पता चला कि मेरे घर से जाते ही एक-दो अनजाने नौजवान मेरे घर में आते है और दरवाजा बन्द कर घन्टो मेरी बीबी फातिमा के साथ रहते हैं। पहले तो मुझे उनकी बातों पर यकीन न आया। यकीन आता भी कैसे। जो फातिमा लड़कपन से मेरे लिए जान दे रही है, वही अब मेरे साथ ऐसा बुरा सुलूक कैसे करेगी लेकिन असली हालत ज्यादा दिन तक मुझ से भी छिपी न रह सकी। मुझे भी वैसी अनहोनी बातों पर आखिर मजबूर होकर यकीन कर ही लेना पड़ा, मेरी गैर-

हाजिरी मे फातिमा के पास कई पुरुष आते जरूर थे। और अन्त मे खुद फातिमा ने रोते-सिसिकते मेरे पैरो से लिपट कर कुबूल किया कि अपनी मर्जी के खिलाफ भी उसे मजबूर होकर अपने गॉव के चार-पॉच आदमियो को खुश करते रहना पडा था और अब शादी-शुदा हो जाने पर भी व उसका पीछा नही छोड रहे हैं। सबब यह था कि उसका एक भाई आवारा निकल गया। उसे चोरी, जुआँ, शराब आदि की लतें पड़ गईं। उसी को सजा जहमत से बचाने के लिए फातिमा को मजबूर होकर अपने गॉव के जमीनदार और पुलिस वालो को खुश करते रहने के लिए मजबूर होना पड़ा था। बाद मे कुछ बदमाशो ने उसके बाप को भी जाल मे फंसा कर रुपये-पैसे की कुछ ऐसी लिखा-पढ़ी करा ली थी कि जब चाहते तब वे बदमाश उसके बाप को सजा करा सकते थे। उनका भी मकसद था फातिमा की भोली खूबसूरती पर डाका डालते रहना। और आखिर हुआ भी वही। बेचारी फातिमा को अपने भाई और बाप को बचाते रहने के लिए अपने शरीर की बलि मजबूर होकर देनी पड़ती थी। फातिमा के इस राज ने मुझे पागल बना दिया। मैंने उन शोहदो से अपनी बीबी का पीछा छुड़ाने के लिए बडी-बड़ी कोशिशे कीं, कई बार मकान बदले, नौकरी तक छोड कर दूसरे शहर जाने का कस्द कर लिया, पर मैं किसी भी तरह उनके चंगुल से बच न सका। फातिमा को मुझ से बेहद मोहब्बत थी। वह मेरे लिए सब कुछ करने-सहने के लिए तैयार थी। किन्तु अपने भाई और बूढ़े बाप को भी मुसीबत मे पड़ते नहीं देख सकती थी। और उन शोहदो को फातिमा की इस कमजोरी का अच्छी तरह से पता था। प्रेम के कारण अनेक बार मैने फातिमा को वैसे गुनाह के लिए भी माफी बख्शी। उसने भी पचासो बार पाक-साफ रहने के वादे किये, कसमे खाईं। पर उन गुंडो के आगे उसकी एक भी न चली।

बीसो बार उसने उन्हें फटकारें बतलाईं, पचासो बार द्वार नहीं खोला, सैकड़ो बार उनसे लड़ी-झगड़ी, लेकिन नतीजा कुछ भी न निकला। गुडों के हाथो मे उसके भाई-बाप की गर्दने जो थी। बस, बकझक कर फातिमा को आखिर उनके सामने झुकना ही पड़ता। और बारबार के इन झमेलो से बड़ी बौखलाहट होती। आखिर किसी तरह इस सांसत की जिन्दगी के दो बरस हमने पार ही कर दिये। इसी बीच फातिमा के पेटमे एक बच्चा भी आया। लेकिन एकदिन उन गुंडो ने न जाने क्याकर दिया, या कुछ खिला-पिला दिया, बस उसी दिन फातिमा के पेट का वह बच्चा कट-कटकर गिर गया। जब मुझे इसका पता चला, तब मैं आपे से बाहर हो गया। फातिमा की भी हालत नाजुक हो गई थी। वह भी मरना चाहती थी। लेकिन आखिर मेरे हृदय ने न माना। उसका मैंने बड़ी मुस्तैदी से इलाज कराया। उसकी जान बच गई। लेकिन फिर वही गुडो वाली मुसीबत शुरू हो गई। आखिर आजिज आकर फातिमा ने मुझे मजबूर किया कि मैं उसका खात्मा कर दू। और मेरे लाख मना करने पर भी वह बराबर मेरे ऊपर जोर डालती गई। अन्त मे एक रात जब मैं घर लौटा, तब मुझे दो गुंडे घर से निकलते देख पड़े। मैं आपे से बाहर हो गया। मैंने उनका पीछा किया। पर वे मेरे हाथ न आये। ताव-पेंच खाता मैं घर लौटा। गुस्से मे आकर मैंने फातिमा को बहुत मारा। वह मेरे पैरो पर गिर कर रो रही थी। अपने बचाव की उसने कोई कोशिश न की। जब मारते-मारते मैं थक गया, तब बेदम होकर बैठ गया। फातिमा एक तरह से होश मे नहीं थी। लेकिन वह किसी तरह आकर मेरे पैरो पर गिर गई। कुछ देर बाद मेरा गुस्सा कुछ कम हुआ। मेरी आँखों ने देखा, फातिमा का सर फट गया है, उसके अन्य अंगो मे भी काफी चोट आई थी। मैं उसके घावो को धोने की कोशिश करने लगा। उसने मेरी गोद में सर

डाल दिया। फिर दोनों बाहों को मेरे गले में डाल कर मेरे सर को अपनी ओर खींच लिया। मैं रो पड़ा, वह भी फूटफूट कर रोने लगी। मैंने उसकी चोटों को धो-धाकर मरहम-पट्टी करनी चाही, पर उसने बड़े कोमल स्वर में मुझे चुपचाप बैठे रहने के लिए मजबूर किया। बाद में मैंने देखा कि गुस्से से पागल होने पर मैंने उसको इतने जोर के डंडे लगाये थे कि उसका एक हाथ और एक पैर शायद बेकाम हो गये थे। मैं उसे गोद में समेट कर बिलख-बिलख कर रोने लगा। वह भी जी भर कर रोती रही। अन्त में उसने मुझे बहुत कुछ समझाया-बुझाया और अपने गले को काटने पर मजबूर किया। मन न रहने पर भी मैंने उसकी मंशा पूरी की... ...।"

अदालत में कोई ऐसा न था, जिसका दिल पिघल न गया हो। पर कानून तो कठोर होता है। अबदुल को जन्म कैद की सजा दी गई।

—:o:—

प्लेग की पिचकारी

हवड़ा स्टेशन पर बड़ी सनसनी फैली हुई थी। लोग तरह-तरह की बातें कर रहे थे। अच्छे कपड़े पहने हुए एक युवक अपनी दाहिनी बाँह को ऊपर उठाये अपने आसपास के व्यक्तियों को एक खास चिह्न दिखला रहा था। उसका कहना था कि जिस समय वह स्टेशन के फाटक से अन्दर आ रहा था, उसी समय किसी ने एक सुई-सी उसकी दाहिनी बाँह में जोर से चुभा दी। जब उसकी बाँह में दर्द-सा हुआ तो उसने झटका देकर

बॉह को हटा लिया और घूमकर देखा। उस समय फाटक पर काफी भीड़ थी, किन्तु उसने देखा कि एक सॉवला-सा नाटे कद का मनुष्य उसके पास से हट कर तेजी-से बाहर की ओर बढ़ा और बात-की-बात मे भीड़ मे मिल कर गायब हो गया। लोगो ने गौर से देखा। बॉह पर किसी चीज के चुभने या किसी कीड़े के डंक मारने का-सा काफी स्पष्ट दाग था। लोग बड़े फेर में थे। किसी की समझ मे न आता था कि मामला आखिर है क्या—कैसा रहस्य है। अनेक प्रकार की बाते हुई। किसी ने कहा कि कोई कीड़ा रहा होगा, कोई बोला कि किसी का पिन या ऐसी ही और कोई चीज कशमकश के कारण छू या लग गई होगी। मामला यो ही दबदबा गया। किन्तु कुछ ही समय बाद उस घटना ने एक भारी सनसनीदार 'ख़ून मारी' के मामले का रूप धारण कर लिया। मामला अन्त मे हाईकोर्ट मे पहुँचा और कलकत्ते की हाईकोर्ट ने सन् १९३६ के जनवरी मास मे उक्त मामले की अपील के संबध मे फैसला सुनाया कि अमरेन्द्र नाथ नामक व्यक्ति को प्लेग की पिचकारी लगा कर मारने के अपराध मे विनयेन्द्र नाथ तथा तारानाथ को काले पानी की सजा दी जाती है। उस समय इस मामले ने दूर-दूर तक बड़ी सनसनी फैला रक्खी थी। अदालत के सामने जो रहस्य खुले, उनका विवरण नीचे दिया जाता है:—

सन् १९२९ मे पाकुर राज के राजा का देहान्त हो गया। उन के दो वारिस थे, विनयेन्द्र और अमरेन्द्र। विनयेन्द्र की आयु उस समय २७ वर्ष की थी और अमरेन्द्र की केवल १६ की। दोनो विमातृ भाई थे। दोनो का स्टेट पर समान हक था। इस राज्य के अलावा इन दोनो को देवगढ़ स्टेट का भी उत्तराधिकार मिलने वाला था। वैसे उस समय रानी सूरजवती देवी ही देवगढ़ रियासत की मालिक थीं। पाकुर राज्य के पुराने राजा के मरने

पर अमरेन्द्र के नाबालिग होने के कारण कुल कारबार की देखरेख का भार विनयेन्द्र के हाथों में आया। विनयेन्द्र बडा अइयाशी था। उसने कई रंडियों तथा रखैलों को जुटा रक्खा था। वैसे भी उसका अनाप-शनाप खर्च बेहद बढ़ा हुआ था। नये-नये शिकारों के फँसाने में और तरह-तरह के आमोद-प्रमोद के आयोजनों में वह पानी की तरह रुपया बहाया करता। इन सब कारणों से उसके भाई अमरेन्द्र से तथा रानी सूरजवती से उसकी खटपट चलती रहती। उसके हाथ में जो भी रकम आ जाती उसे वह अपने निजी खर्चों में उड़ा देता। अमरेन्द्र की शिक्षा-दीक्षा तथा खाने-खर्च के लिए भी वह ठीक से रुपया न देता। इससे दोनों भाइयों में मनोमालिन्य और भी अधिक बढ़ गया। धीरे-धीरे दिन बीतते गये। १९३१ में अमरेन्द्र बालिग हो गया। बालिग होते ही उसने रियासत के मामलों में दखल देने और अपने अधिकारों को अमली तौर पर प्रकट करने की चेष्टाएँ प्रारम्भ की। वह रियासत वाले अपने हक को महफूज करने पर तुल गया था। सन् १९३२ के मई मास में उसने कुछ ऐसे प्रभावशाली व्यक्तियों को अपना पैरोकार और एटार्नी बनाया, जिन पर उसके भाई विनयेन्द्र का ज्यादा दबाव नहीं पड़ सकता था। इसके साथ ही अपने हक की हिफाजत के लिए उसने बड़े-बड़े मशहूर वकीलों-बैरिस्टरों की भी कानूनी सलाह लेनी शुरू की। अमरेन्द्र की ये सब बातें उसके भाई को अच्छी न लगीं। उसने उलटा-सीधा समझा कर अमरेन्द्र को इस बात पर राजी कर लिया कि वह अपने पैरोकारी और एटार्नी वाले इन्तिजाम को रद्द कर दे। पहले तो अमरेन्द्र राजी न होता था, पर जब उस पर बहुत दबाव पड़ा, तब उसने अपने भाई की बात मान ली। किन्तु कुछ ही दिन बाद मामला फिर तूल पकड़ने लगा। दोनों भाइयों में बैर-विरोध बराबर बढ़ता ही गया।

१९३२ के दशहरे के अवसर पर कुछ ऐसी घटनाएं घटीं जिनसे अमरेन्द्र को तथा रानी तथा सूरजवती को इस बात का विश्वास-सा हो गया कि विनयेन्द्र रियासत को हथियाने के लिये घोर से घोर कर्म भी करने के लिए तैयार हो सकता है। उनसे यह छिपा न रह गया कि यदि आवश्यकता पड़ी तो वह अपने भाई अमरेन्द्र की जान भी ले सकता है। बात यह हुई कि पूजा महोत्सव के अवसर पर रानी सूरजवती ने अपने दोनो भतीजों को देवगढ़ बुलाया। दोनो भाई खुशी-खुशी पूजा मे सम्मिलित होने के लिए गये। वहाँ एक दिन विनयेन्द्र जोर डाल कर अमरेन्द्र को अपने साथ घूमने के लिये ले गया। घूम कर लौटते ही अमरेन्द्र एकाएक बीमार पड़ गया। सब का बड़ा क्षोभ हुआ। सुरेन्द्रनाथ मुकरजी नामक एक डाक्टर ने अमरेन्द्र की परीक्षा की तो पता चला कि टेटेनस इंफेक्शन नामक छूतवाला रोग हो गया है। डाक्टर एन्टी-टेटेनस-सीरम द्वारा रोगी का इलाज करने लगा। और इधर अमरेन्द्र के बीमार पड़ते ही विनयेन्द्र एकदम भाग खड़ा हुआ। उस के साथ एक कम्पाउण्डर भी आया था। विनयेन्द्र के साथ ही वह कम्पाउण्डर भी गायब हो गया। लोगों को बड़ा ताज्जुब हुआ। किन्तु तब तक किसी को किसी प्रकार का शक न हुआ था। लोगो ने समझा कि छूतदार बीमारी समझकर विनयेन्द्र डर गया है और यहाँ से हट गया है। रानी ने उसके पास पाकुर राज्य के पते से तार भेजा कि तुम राजघराने के डाक्टर को लेकर तुरंत चले आओ। विनयेन्द्र को तार मिल गया। वह तुरंत कलकत्ता चला गया और तारानाथ नामक एक नये डाक्टर को लेकर देवगढ़ जा पहुँचा। रानी ने इस नये डाक्टर को पसन्द नहीं किया। राजघराने के डाक्टर को न लाकर विनयेन्द्र एक दूसरे ही नये डाक्टर को लाया। इस बात ने लोगों को तनिक सशंकित कर दिया। और यह नया डाक्टर तारानाथ जब आते ही डाक्टर मुकरजी पर जोर डालने

लगा कि तुम रोगी को 'सीरम' न देकर 'मारफिया' दो, तब तो लोगों की आशंका और भी अधिक बढ़ गई। तारानाथ के रंग-ढंग, व्यवहार-व्यवस्था ने तो रानी को भी विह्वल कर डाला। अमरेन्द्र की रक्षा-चिकित्सा के लिए सभी अधिक सतर्क-सावधान हो उठे। तारानाथ ने दवा बदलवाने की की बड़ी चेष्टा की, किन्तु न तो दवा ही बदली गई, और न रोगी उसके हाथ में दिया ही गया। इस बीमारी ने अमरेन्द्र के प्राण तो न ले पाये, किन्तु उसके दिल को कमजोर और क्षतिग्रस्त कर छोड़ा। दूसरे, अमरेन्द्र का सारा शरीर १९३३ के अप्रैल मास तक ठीक से स्वस्थ न हो सका। लोगों को शक हो गया कि जो कम्पाउण्डर विनयेन्द्र के साथ आया था उसने कोई-न-कोई चाल खेली है। इसके साथ ही राजघराने के अनुभवी विश्वस्त डाक्टर को न लाकर तारानाथ को लाने के कारण लोगों को यह विश्वास हो गया कि यदि विनयेन्द्र को मौका मिलता तो अमरेन्द्र जीवित नहीं बच सकता था।

इधर अमरेन्द्र बीमार पड़ा था, उधर विनयेन्द्र रियासत का जो भी रुपया जहाँ से मिलता, अपने हाथ में करने लगा। उसने कई हजार रुपये बैंकों से भी निकाल लिया। एक मामले में दोनों भाइयों की ओर से संयुक्त रूप में अदालत में १५००० रुपये जमा किये गये थे। विनयेन्द्र ने उस रुपये को निकाल कर अपने कब्ज़े में करने की कोशिश की। किन्तु अमरेन्द्र ने इसे स्वीकार न किया। पर विनयेन्द्र न माना। तब अमरेन्द्र ने कानूनी सलाहकार द्वारा अदालत में लिखित उज्र पेश की कि वह रुपया केवल विनयेन्द्र का नहीं है, इस कारण केवल एक ही व्यक्ति को उसे न निकालने दिया जाये। विनयेन्द्र के कोशिश करने पर भी अदालत ने अमरेन्द्र का दावा स्वीकार कर रुपये को जमा रहने दिये जाने की आज्ञा दी। इस मामले से दोनों भाइयों में और भी अधिक अनबन हो गई। किन्तु इसके पहले ही विनयेन्द्र इस फिराक में

था कि जैसे भी हो अमरेन्द्र का काम तमाम कर दिया जाये और पूरी रियासत पर कब्जा जमाया जाये। वह यह भी चाहता था कि अमरेन्द्र की मृत्यु इस प्रकार से हो कि किसी को विशेष कुछ कहने सुनने का मौका न मिले। इसी उद्देश्य से उसने कलकत्ते के एक पतित व्यक्ति को अपने इस षडयन्त्र में शामिल कर लिया था। उसका नाम डाक्टर तारानाथ था। उसने विनयेन्द्र से वादा किया था कि मैं पिचकारी द्वारा प्लेग के कीड़े अमरेन्द्र के बदन में पहुँचा कर उसे मार डालूंगा, और किसी को शक भी न होगा। अब सवाल था प्लेग के कीड़ों को प्राप्त करने का। रोगों की जाँच-पड़ताल करने और नवीन औषधियों के असर, गुण, दोष की परीक्षा के लिए कुछ खास-खास स्थानों में सभी रोगों के कीटाणु सुरक्षित रक्खे जाते है और विशेषज्ञ उन पर परीक्षण एवं खोज-जाँच किया करते हैं। बम्बई में हाफकिन इंस्टीच्यूट नामक संस्था में सरकारी तौर पर कीटाणु रक्खे जाते हैं। किन्तु उनके दिये जाने के इतने कठोर नियम बना दिये गये हैं, कि आमतौर पर कोई भी दुष्ट व्यक्ति उन्हें प्राप्त कर जनता का अहित नहीं कर सकता। जब विनयेन्द्र ने देखा कि और किसी दूसरे उपायसे अमरेन्द्र के हिस्से की संपत्ति उसे नहीं मिल सकती तब उसने तारानाथ की सहायता से उसे प्लेग की पिचकारी लगवा कर इस संसार से सदा के लिए विदा कर देने की ठान ली। १९३२ के मई मास की १२ वी तारीख को तारानाथ ने हाफकिन इंस्टीच्यूट बम्बई को एक एक्सप्रेस पेड तार दिया कि परीक्षण एवं जाँच-खोज के लिए प्लेग के कीटाणुओं की आवश्यकता है, तुरंत भेज दिये जायें। पर इंस्टीच्यूट ने उत्तर दिया कि बंगाल के सरजन जनरल की आज्ञा के बिना कलकत्ते में किसी को भी प्लेग के कीटाणु न भेजे जा सकेंगे।

हाफकिन इंस्टीच्यूट के उत्तर से विनयेन्द्र फेर में पड़ गया।

बंगाल के सरजन जनरल से इजाजत लेने की हिम्मत न पड़ी। तब तारानाथ ने दूसरा ही जाल रचा। उसने यह घोषित किया कि मैंने प्लेग की एक अचूक औषधि खोज निकाली है, उस दवा के कारण कोई भी प्लेग का रोगी अच्छा किया जा सकता है। कलकत्ते के प्रसिद्ध डाक्टर उकील ने अपने यहाँ एक परीक्षण-शाला (लेबेटरी) खोल रक्खी है। उन्होने प्लेग की परीक्षा के लिए बम्बई के हाफकिन इस्टच्यूट से प्लेग के कीटाणु बकायदे मँगाये। डाक्टर तारानाथ को इन बातो का पता चल गया। वह डाक्टर उकील के पास गया और उन्हें बतलाया कि मैंने प्लेग की अचूक औषधि खोज निकाली है, यदि आप कृपा करें तो मैं आप की प्रयोग-शाला में आपके सामने प्लेग के कीटाणुओ पर उसका प्रयोग करके देख लूं। डाक्टर उकील राजी हो गये। तारानाथ ने प्लेग के कीटाणुओ को लेकर कार्य प्रारंभ किया, किन्तु विशेष कुछ करधर न सका और डाक्टर उकील ने उन सब को अपने सामने नष्ट करा डाला। तारानाथ ने डाक्टर उकील से बहुत कहा कि आप फिर से बम्बई से प्लेग के कीटाणुओ को मँगवा लीजिये. पर उन्होंने उसकी बात न मानी। किन्तु कुछ दिन बाद उसने डाक्टर उकील से बम्बई के हाफकिन इंस्टीच्यूट के नाम एक पत्र लिखा लिया कि डाक्टर तारानाथ ने प्लेग की एक दवा खोज निकाली है, यदि उन्हे इंस्टीच्यूट परिक्षण का मौका दे सके तो उत्तम हो। इस पत्र को लेकर विनयेन्द्र बम्बई गया और ओरियन्टल होटल में ठहरा। उसने अपने निजी पते के स्थान पर तारानाथ का कलकत्ते वाला पता दर्ज कराया। इसके बाद वह इंस्टीच्यूट के डाक्टर नायडू से मिला और उन्हें सिफारशी पत्र दिया। डाक्टर नायडू ने कहा कि इंस्टीच्यूट के डायरेक्टर की आज्ञा के बिना कोई भी इंस्टीच्यूट में जाकर परीक्षण का कार्य नहीं कर सकता। विनयेन्द्र ने डाक्टर नायडू को राजी करने की बड़ी चेष्टा की, किन्तु

वह सफल न हो सका। अन्त में वह हार कर कलकत्ते लौट आया। किन्तु वह दुबारा फिर बम्बई गया और मन-न्यू होटल में ठहरा। इसबार उसने हाफकिन इंस्टीच्यूट के दो वेटिनरी सरजनों को रुपये का लालच देकर इंस्टीट्यूट से प्लेग के कीटाणु प्राप्त करने चाहे, किन्तु इस प्रकार चुरा-छिपा कर कीटाणुओं को देने के लिए कोई तैयार न हुआ। उसे यह पता जरूर लग गया कि आर्थर रोड इंस्टीट्यूट डिजीजेज हास्पिटल से परीक्षण के लिए प्लेग के कीटाणु प्राप्त किये जा सकते हैं। विनयेन्द्र ने हास्पिटल से कीटाणु प्राप्त करने की ठानी। इस हास्पिटल के अधिकारियों से वह मिला। डाक्टर पटेल से उसने कहा कि जनता के लाभ के लिये ही डाक्टर तारानाथ प्लेग की औषधि का परीक्षण करना चाहते हैं, आप अपने हास्पिटल में ऐसा प्रबन्ध कर दीजिये कि प्लेग के कीटाणुओं पर उस दवा के प्रयोग तारानाथ द्वारा किये जा सकें। डाक्टर पटेल को वैसे किसी छल-कपट का शक न हुआ इस कारण उन्होंने एक औषधि के परीक्षण का अवसर देने के विचार से अपने सहकारी डाक्टर मेहता को आज्ञा दे दी कि तुम हास्पिटल में उक्त परीक्षण के लिए प्रबन्ध कर दो। विनयेन्द्र अपने प्रयत्न में सफल हुआ। उसने डाक्टर तारानाथ को कलकत्ते से बुला लिया। १९३३ के जौलाई मास की ७ तारीख को तारानाथ ने हास्पिटल मे जाकर अपनी औषधि का परीक्षण प्रारम्भ किया। हास्पिटल के अधिकारियों ने इस परीक्षण के लिए हाफकिन इंस्टीट्यूट से प्लेग के कीटाणुओं की एक ट्यूब मँगवा ली थी। उसी में से कुछ कीटाणु निकाले गए और चूहों पर प्रयोग चलने लगा। तारानाथ पाँच दिन तक बराबर परीक्षण मे व्यस्त-सा रहा। किन्तु पाँचवें दिन उसने डाक्टर मेहता से कहा कि एकाएक मुझे कलकत्ते जाना पड़ रहा है, एक ऐसा काम आ पड़ा है जिसे मुझे खुद ही तुरंत देखना-चलाना है, किन्तु मैं

बहुत जल्द वापस आकर अपने इस अधूरे परीक्षण को पूरा करूँगा। वह इतनी उतावली में था कि डाक्टर पटेल से खुद न मिल सका, इस कारण डाक्टर मेहता द्वारा उनकी कृपा के लिए कृतज्ञता प्रकट की। विनयेन्द्र भी उसी के साथ कलकत्ते वापस आ गया। परीक्षण के समय डाक्टर तारानाथ ने प्लेग के कुछ कीटाणु उड़ा लिये थे। उन्हीं को एक इंजेक्शन वाली पिचकारी में भर एक आदमी के जरिये उसने तारीख २६ नवम्बर सन् १९३३ को हवड़ा स्टेशन पर फाटक से अन्दर जाते समय अमरेन्द्र की बाँह में प्रवेश करा दिया था। विनयेन्द्र तथा तारानाथ का मकसद पूरा हो गया था, इस कारण वे लौट कर फिर बम्बई में अपने औषधि-परीक्षण के लिये गये ही नहीं।

बम्बई से प्लेग के कीटाणु उड़ा लाने के बाद विनयेन्द्र उन्हें अमरेन्द्र के शरीर में प्रवेश कराने के उपाय सोचने लगा। तारानाथ ने कीटाणुओं को एक इंजेक्शन वाली पिचकारी में भर कर इस य ग्य कर दिया कि पिचकारी की नन्हीं-पतली सुई के चुभते ही कीटाणु आसानी से किसी के भी शरीर में प्रवेश करा दिये जा सकें। एक आदमी इस काम के लिए ठीक कर लिया गया। उसका काम था अनजाने में अमरेन्द्र के शरीर में सुई चुभो कर कीटाणुओं को उसके बदन में प्रवेश करा देना। कई बार विनयेन्द्र उस मनुष्य को लेकर ऐसे स्थानों में गया जहाँ वह उसे अमरेन्द्र को पहचनवा दे। सेनिमा आदि में जाने पर अमरेन्द्र ने देखा कि बिना बुलाये ही विनयेन्द्र उसके पास पहुँच जाता है। हर बार उसके साथ एक मनुष्य देख पड़ा। इन बातों से लोगों के दिलों में शक हो गया। अन्त में रानी सूरजबती ने तय किया कि विनयेन्द्र से अमरेन्द्र को बचाने का यही उपाय है कि वह अमरेन्द्र को अपने साथ अपनी रियासत ले जाये। जाने की तारीख भी तय हो गई। जाने के एक दिन पहले उसके पास विन-

येन्द्र गया और बड़ी नम्रता से बोला कि मैं आपको पहुँचाने के लिए स्टेशन जरूर चलूँगा। पहले तो सबको बड़ा ताज्जुब हुआ, क्योंकि इधर इन लोगों में काफी अनबन हो चुकी थी, किन्तु फिर रानी ने सोचा कि आखिर अपने अपने ही हैं, विनयेन्द्र फिर भी है तो सगा ही, वह प्रेम-स्नेह के कारण उन्हें पहुँचाने के लिए स्टेशन जाने के लिए तैयार है। उसने भी प्रेम से विनयेन्द्र की बात का स्वागत किया। तारीख २६ नवम्बर १९३३ को रानी सूरजवती अमरेन्द्र तथा उसकी बहन तथा भतीजी को लेकर अपने लवाजमें के साथ हवड़ा स्टेशन पर गई। वहाँ उसे विनयेन्द्र मिला। उसने बड़ी आवभगत की, बड़ी श्रद्धा-भक्ति दिखलाई। इस दल के आगे आगे चला अमरेन्द्र. बीच मे थी रानी, अमरेन्द्र की बहन आदि और सब के पीछे था विनयेन्द्र। फाटक से जाते समय भीड़ मे किसी ने अमरेन्द्र की बाँह मे सुई-सी चुभा दी। क्षण दो-क्षण तो उसे कोई विशेष बात न समझ पड़ी। उसे कुछ गड़ने की-सी पीड़ा जरूर हुई, पर क्षण-दो-क्षण उसने विशेष ध्यान न दिया। बाद मे उसे कुछ शंका हुई। सुई के चुभने के स्थान पर जलन सी होने लगी थी। उसने अपने साथ वालों से सुई के चुभने की बात बतलाई। कपड़े हटा कर देखने पर पता चला कि बाँह के जिस भाग में सुई-सी चुभोई गई थी, वहाँ एक बड़ा चकत्ता-सा पड़ा हुआ था। कुछ हाय-तोबा मची। इस पर विनयेन्द्र ने कहा कि वैसी कोई खास बात नहीं, किसी कीड़े-मकोड़े ने डंक मार दिया होगा, तनिक कपड़े उतार कर देख लो। कपड़े उतारे-झाड़े गये। पर किसी कीड़े-मकोड़े का पता न चला। तब विनयेन्द्र ने फिर कहा कि कोई व्यक्ति अपने कोट-वास्कट में पिन लगाये होगा, शायद वही चुभ गई होगी। यह तो मामूली बात है, वैसी कोई खास बात तो है नहीं। उसकी बातों से, उसके हाव-भाव से और इस प्रकार एकाएक सुई के चुभाये जाने

तथा चुभे हुये स्थान पर चकत्ते के पडने के सबब से अमरेन्द्र के हित मित्रों के मन में भारी शंका उत्पन्न हो गई थी। वे डर कि विनयेन्द्र ने कोई चाल न खेली हो, कुछ अनिष्टकर काण्ड न रचा हो। कुछ व्यक्तियों की राय हुई कि जाना स्थगित कर दिया जाये और कलकत्ते में ही रुक कर जाँच करा ली जाये कि आखिर बाँह में लगा तो क्या लगा, मामला क्या है। किन्तु विनयेन्द्र ने जोर देकर समझाया कि यह कोई वैसी खास डर की बात नहीं है; जब जाने की पूरी व्यवस्था हो ही चुकी है तब स्टेशन पर आकर अब न जाना हास्यास्पद-सा लगेगा। उस जरा-सी घटना के कारण जाना न रुकना चाहिये। अन्त मे रानी सूरजवती ने जाने का ही निश्चय किया। किन्तु उसके मन में भी न जाने क्यो किसी अनिष्ट की आशका रह-रहकर उठ रही थी। अमरेन्द्र भी चला गया। किन्तु उसे अपने एक मित्र का पत्र मिला जिसमे विनयेन्द्र के सबंध मे बडी शंका प्रकट की गई थी और अमरेन्द्र से अनुरोध किया गया था कि तुम कलकत्ते आकर शीघ्र ही इस मामले की जाँच योग्य डाक्टरो से करा लो। अमरेन्द्र भी डर ही रहा था। उसे भी चैन न थी। वह तारीख २६ नवम्बर को कलकत्ते लौट आया। डाक्टरी जाँच कराई गई। कलकत्ते के नामी-नामी डाक्टरों ने जाँच के बाद तय किया कि किसी ने इंजेक्शन वाली पिचकारी से उसके बदन मे किसी चीज का इंजेक्शन दिया है। और भी उपाय किये गये। पर प्लेग का आक्रमण हो ही गया और चार दिन बाद अमरेन्द्र तड़प-तड़प कर मर गया। मरने के पहले उसके शरीर से खून लिया गया था और डाक्टरों ने उसकी परीक्षा ध्यान से की थी। अमरेन्द्र के खून मे प्लेग के कीटाणु पाये गये। डाक्टरों ने खून से प्राप्त कीटाणुओं का प्रयोग चूहों पर किया। उससे स्पष्ट हो गया कि कीटाणु प्लेग के ही थे। डाक्टरों ने

इसकी सूचना पब्लिक हेल्थ के सरकारी अधिकारियों को देदी। कुछ दिनों के लिये मामला यहीं तक रह गया।

इधर अमरेन्द्र की इस प्रकार आकस्मिक, असामयिक एवं घटनापूर्ण मृत्यु से उसके सगे-संबधियों, हित-मित्रो को बड़ा शोक-क्षोभ हुआ। सभी को शक्रा हो गई थी कि इसमें विनयेन्द्र का हाथ जरूर है। मामला पुलिस और अदालत तक ले जाने में राजघराने की प्रतिष्ठा मे बट्टा लगने का भय था। किन्तु अमरेन्द्र की शाक पूर्ण मृत्यु ने सभी को विह्वल बना दिया था। किन्तु तो भी २२ जनवरी सन् १९३४ तक कुछ न किया गया। अन्त में अमरेन्द्र के मित्र कमलाप्रसाद पाँडे ने (जिसने उसे पत्र लिख कर सुई के चुभने के सबंध में जाँच कराने के लिए कलकत्ता वापस बुलाया था।) कलकत्ता के डिप्टी कमिश्नर आफ पुलिस के पास एक प्रार्थना पत्र भेजा, जिसमे पाकुर राज्य के उत्तराधिकारियों के पेंचदार मामले का हवाला देते हुए अमरेन्द्र को इस प्रकार घटना पूर्ण मृत्यु के संबंध में सरकारी तौर पर जाँच किये जाने का अनुरोध किया गया था। बड़े सोच-विचार के बाद अधिकारियो ने इस मामले मे खुफिया जाँच शुरू की। कुछ ही समय मे विनयेन्द्र तथा तारानाथ के कारनामो का पूरा-पूरा पता खुफिया ने लगा लिया। बम्बई से प्लेग के कीटाणुओ के चुरा कर लाये जाने और एक व्यक्ति द्वारा इंजेक्शन की पिचकारी के जरिये उन्हें हबड़ा स्टेशन पर अमरेन्द्र की बाँह मे प्रवेश कराने तक की पूरी कार्रवाई का पक्का सुबूत अदालत के सामने उपस्थित कर दिया गया। विनयेन्द्र तथा डाक्टर तारानाथ गिरफ्तार कर लिये गये। जोर-शोर से मुकद्दमा चला। बढ़ी हलचल मची। अदालत ने अपराधियों को सजा सुना दी। मामले की अपील हाईकोर्ट में की गई। कलकत्ते के नामी-भारी-भारी वकील-बैरिस्टर अभियुक्तो की ओर से पैरवी के लिए नियुक्त किये गये।

किन्तु हाईकोर्ट ने जुर्म को साबित माना। यह सुबूत पेश किया गया कि सन् १९३२ के जौलाई मास में चुराये गये प्लेग के कीटाणु नवम्बर मास तक सही सलामत, जीवित एव सशक्त रह सकते हैं। विनयेन्द्र की सारी बातो पर विचार करने पर अदालत इसी नतीजे पर पहुँची कि रियासत पर पूरा अधिकार पाने के लालच में पड़कर उसने अमरेन्द्र को अपने रास्ते से हटाने के लिए जो भी हो सका, उठा नहीं रक्खा। अन्त मे जनवरी सन् १९३६ मे हाईकोर्ट से विनयेन्द्र तथा तारानाथ का कालेपानी की सजा सुनाई गई। प्लेग की पिचकारी के सनसनीदार मामले ने तहलका मचा रक्खा था।

—:o:—

लाश के साथ सोना

'नवाब साहब ने शम्शाद बाई नामक रंडी को मार डाला और फिर वे उसकी लाश के साथ दस-बारह घंटे तक एक पलंग पर पड़ रहे।'

यही बात सबकी जबान पर थी। आधी रात के करीब नौकरों ने आकर देखा कि नवाब साहब शम्शाद के साथ लेटे हुए हैं, उनका तकिया खून से सराबोर था। जमीन पर एक रिवाल्वर पड़ा हुआ था। बड़ी दौड़-धूप की गई, पुलिस सुपरिंटेंडेंट और डिप्टी कमिश्नर को सूचना देने के लिए बड़े-बड़े आदमी गये, और अन्त मे साढ़े तीन बजे रिपोर्ट बकायदा पुलिस में दर्ज

कराई गई कि आधी रात के बाद झग के वकील मनोहर लाल की तलबी नवाब मोहम्मद नवाज के बगले पर हुई। मनोहरलाल वहाँ गया पर कमरे के अन्दर दाखिल न हो कर, बाहर स ही पूछा कि मामला क्या है, इस पर नवाब मोहम्मद नवाज़ ने सिर्फ यही बतला दिया कि शम्शाद बाई मर गई है। इसके अलावा और कोई भी बात नहीं बतलाई और न मरने के बार मे कोई बयान ही दिया। मनोहरलाल ने पुलिस रिपोर्ट मे यह भी दर्ज कराया कि नवाब साहब इस वक्त भी शम्शाद बाई की लाश के साथ उसी पलग पर लटे हुए है।

रिपोर्ट दर्ज करने के बाद पुलिस का एक सब-इन्स्पेक्टर मौके का मुआयना करने के लिए सवा पॉच बजे सबेर आया, उस वक्त भी नवाब साहब शम्शादबाई का लाश के साथ लटे हुए थे, एक कम पावर की बिजली का बल्ब जल रहा था, उसकी मद्धिम रोशनी मे सब-इन्स्पेक्टर ने देखा कि मोहम्मद शाह नवाज़ लाश के साथ लेटे हुए हैं, फर्श पर एक रिवाल्वर पड़ा हुआ है। सब इन्स्पेक्टर ने रिवाल्वर को उठा कर सूंघा। उसस जो बू निकल रही थी, उससे साफ जाहिर हो रहा था कि गोला कुछ देर पहले छोड़ी गई थी। उसने रिवाल्वर को खोला, उसमे से चार पूरे भरे हुए कारतूस निकले, और साथ ही दो चले हुए कारतूसों की खोल मिली। पास ही एक और एक भरी हुई बन्दूक रक्खी मिली। उसी कमरे मे एक सूटकेस था जिसमे एक भरी हुई पिस्तौल भी पाई गई।

इसके बाद ६ बजे पुलिस के डिप्टी सुपरिटेंडट आये, उस वक्त भी नवाबसाहब उसा लाश के साथ उसी तरह लेटे हुए थे। कमरे की फिर जॉच की गई। इस बार की जॉच से पता चला कि रिवाल्वर दो बार चलाया गया था। एक

गोली एक सूटकेस के पीछे, खिड़की के नीचे पड़ी मिली, पर दूसरी गोली का पता उस वक्त न चला। पलग के पास दीवाल पर गोली के लगने का निशान बना हुआ था।

साढ़े आठबजे एक फोटो-ग्राफर बुलाया गया और नवाब साहब और शम्शाद बाई की लाश के फोटो उतरवाये गये।

९ बजे फर्स्ट क्लास मजिस्ट्रेट ने घटनास्थल पर आकर नौकरों के बयान दर्ज किये। अन्त मे दिन के दस बजने पर नवाब साहब ने उस बिस्तर से बिदा ली, जिस पर वे लाश के साथ करीब दस घटे से लेटे हुए थे। उनकी जामा तलाशी ली गई। उनके पास से एक कीमती ब्रासलेट और २५००० के करेंसी नोट बरामद हुए, दो नोट तो दस-दस हजार के थे और पाँच नोट एक-एक हजार के। नवाब साहब ने उस वक्त कोई भी बयान नहीं दिया। बाद मे उसी दिन नवाब साहब शम्शादबाई नामक वेश्या का गोली से मार डालने के अपराध मे गिरफ्तार किये गये।

यह वाकया ता० ८ नवम्बर सन् १९४१ का है। मामला सेशन सिपुर्द किया गया। करीब डेढ़ माह हवालात में रहने के बाद अदालत ने जमानत पर अभियुक्त को छोड़ दिया। किन्तु बाद मे हाईकोर्ट ने जमानत मन्सूख कर दी और नवाब साहब फिर हिरासत मे ले लिये गये। लेकिन बीमारी की वजह से वे जेल में न भेजे गये, वरन् निगरानी के साथ अस्पताल मे रक्खे गये।

१२ फरवरी १९४२ को मामला सेशन अदालत के सामने आया। यह झंग की बात है। बाद मे सरकारी वकील ने उज्र पेश की कि झंग मे अभियुक्त का बहुत ज्यादा दबदबा और प्रभाव है, इस सबब से अदालत पर तथा गवाहो पर बेजा दबाव

पड़ सकता है और न्याय-निर्णय में फर्क पड़ सकता है, इस कारण मामला झंग की अदालत से उठाकर लाहौर की अदालत में भेज दिया जाये। सरकारी वकील की उज्र मंजूर कर ली गई और यह सनसनीदार मामला लाहौर के शेसन जज की अदालत में दे दिया गया।

अभियुक्त ने रुपये को पानी की तरह बहाकर लाहौर, झंग तथा अन्य स्थानों के बड़े-से-बड़े और नामी से नामी वकीलों-बैरिस्टरों को अपनी पैरवी के लिए खड़ा किया, दौड़-धूप, पैरवी पैराकारी दबाव-प्रभाव, सलाह-मशविरे के लिए हजारों रुपये दिये जाने लगे। अदालती कार्रवाई देखने-सुनने के लिए सेशन-कोर्ट में हजारों की भीड़ होने लगी। मामला जोर-शोर से चला। अदालत के सामने जो बातें खुलीं वे इस प्रकार हैं:—

नवाब मोहम्मद नवाज खाँ का जन्म पंजाब के एक सब से आला नवाब खान्दान मे सन् १९११ मे हुआ था। उनके जन्म के कुछ ही दिन बाद उनके पिता नवाब मेहर हक नवाज खाँ का देहान्त हो गया। पिता के मरने पर बालक नवाब मुहम्मद नवाज रियासत के वारिस हुए। उनके पिता ने दो शादियाँ की थीं। मोहम्मद नवाज को उनकी दोनों ही माताएँ एक समान प्यार करती थीं। बालक बहुत ही सुन्दर, होनहार और सुशील जान पड़ता था। रियासत के भावी नवाब की शिक्षा-दीक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। बालक की पढ़ाई-लिखाई के लिए एक मशहूर योरोपियन शिक्षक नियुक्त किया गया।

कुछ बड़े होने पर बालक नवाब को लाहौर के प्रसिद्ध एटकिंसन कालेज में भरती करा दिया गया। कालेज में बालक नवाब अपनी शाहखर्च तबीयत और जिन्दादिली के लिए मशहूर हो गये। उनके सहपाठी उन्हें बहुत चाहने

लगे। उनके शिक्षक उन पर विशेष कृपा-दृष्टि रखने लगे। मोहम्मद नवाज़ पढ़ने-लिखने में जितने ही कमज़ोर थे, बात-व्यवहार में उतने ही चतुर-कुशल। उनकी शाहाना तबियत की तो हमेशा चर्चा चलती रहती थी। नये नवाब की रियासत ने, उनके रंग-रूप ने, उनकी मान-मर्यादा ने छुटपन से ही उन्हें पंजाब भर में मशहूर कर रक्खा था।

होश सम्हालते-सम्हालते उनकी शादी के पैग़ाम भारी-भारी जगहों से आने लगे। और अन्त में उस समय के पंजाब के सबसे प्रभाव-शाली व्यक्ति ने उन्हें अपना दामाद बना लिया। नवाब मोहम्मद नवाज़ की शादी पंजाब के उस समय के एज्यूकेशन मिनिस्टर मियाँ फजली-हुसैन की सुन्दरी सुशिक्षिता प्रसिद्ध कन्या के साथ हो गई। यथा समय एक कन्या-रत्न ने भी जन्म लिया।

किन्तु नये नवाब को ऐयाशी का भयंकर रोग बुरी तरह से लग चुका था। नये-नये शिकारों को फँसाने और नई-नई नाज़नियों को काबू में करने की धुन में नवाब ने दीन-दुनिया को भुला रक्खा था। और नये-नये हुस्न के नज्ज़ारे के लिए इतनी बड़ी-बड़ी रकमें गलानी पड़तीं कि नवाब साहब को अपनी रियासत से मिलने वाले बीस हजार रुपये माहवार में भी तंगी का सामना करते रहना पड़ता। बीस हजार रुपये माहवार में भी उनके खर्चे पूरे न हो पाते। हमेशा उन्हें रुपयों की कमी की शिकायत बनी रहती।

लाहौर में अपने आलीशान महल में नवाब साहब जो दावतें देते, जो महफिलें जुटाते उनमें दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह हजार रुपये बातों की बात में उड़ जाते। मशहूर उस्तादों, गवैयों के ठट-के-ठट उनकी ड्योढ़ी पर हाज़िरी देते रहते,

मशहूर तवायफों के डेरे पड़े ही रहते। उम्दा-उम्दा शराबों की नदी-सी बहती रहती। नाच-गाने का समाँ बँधा रहता। जो तवायफ उन्हे एक बार खुश कर देती। उसे वें जिन्दगी भर के लिए निहाल कर देते। दौलत को तो दोनों हाथों से लुटाते रहने में ही उन्हें मजा आता था।

जब झंग के शाही महलों के राग-रंग से जी ऊब जाता, तब वे गवैयों, तवायफों, खिदमतगारों, सुन्दरियो मुसाहबों की लम्बी फौज लेकर मशहूर-मशहूर जगहों की सैर के लिए निकलते। जिस स्टेशन पर उनका लवाजमा पहुँचता वहाँ तहलका मच जाता। पूरी ट्रेन के आधे डब्बे तो उनके साथ चलने वाली फौज से भर जाते। इन सैरों में हजारों ही नहीं, लाखों रुपये गल जाते। नतीजा यह हुआ कि रियासत के कुछ हिस्से बेच डाले गये, कुछ गिरवी रखकर महाजनों से लम्बे-लम्बे कर्ज लिये गये।

नये नवाब ने अपनी ऐयाशी के लिए रियासत को फूँकना-तापना शुरू कर दिया। उनकी शादीशुदा बेगम ने उन्हे समझाने-राह पर लाने की बेहद कोशिश की, उनके ससुर मियाँ फज़ली-हुसैन ने उनकी भलाई के लिए कोई बात उठा न रक्खी, पर उनके आगे किसी की भी न चली। न तो नवाब ने ऐयाशी से मुँह मोड़ा और न फिजूलखर्ची की आदत से ही बाज आये। आखिर आजिज आकर उनकी पहली बेगम साहबा ने तलाक का सहारा लिया। अन्त मे १९३६ में तलाक की कार्रवाई पूरी कर दी गई। दोनों को एक-दूसरे से छुटकारा मिल गया।

नवाब ने ताव में आकर फौरन ही दूसरी शादी कर ली। लेकिन उनकी ये दूसरी बेगम साहबा ज्यादा दिन तक उनके

हरम को अपने हुस्न से रौनक न बख्श सकीं। शादी के कुछ ही दिन बाद उन्हे दूसरी दुनिया के सफर की तैयारी करनी पड़ी। नवाब का हरम फिर सूना हो गया। लेकिन इसकी उन्हें वैसे ज्यादा परवाह न थी। उनकी तबियत के बहलाव के लिये तरह-तरह के दूसरे इन्तिजाम जो थे, रूप का हाट उनके रुपये के जोर से सदा उनके लिये खुला जो रहता था!

इसी बीच में योरोप में दूसरा जंग छिड़ गया। नवाब साहब की तबियत मे जोश आया, शायद पुराने खानदानी खून में कुछ जंगी हरारत पैदा हुई हो। उन्होने फौज मे शामिल होने का इरादा किया। शाही कमीशन मिलते देर न लगी, और नवाब फौज की भरती वाले मोहकमे में आ गये। इस काम मे उनका शुरू-शुरू में मन भी खूब लगा। अभी तक वे सुरा और सुन्दरियों की सेवा-सहवास को छोड़ कर और दूसरा कोई भी ढग का काम कर ही न सके थे। असल में उनकी दुनिया शराब और तवायफों तक ही ज्यादातर महदूद थी। दूसरे काम का उन्हें भान भी न था। इस नये काम मे उन्हें कुछ-कुछ मजा आने लगा।

किन्तु ऐयाशी और शराब की बेहद पिलाई ने उनके दिल, दिमाग और बदन की अजो-अजो को बिल्कुल बेकाम कर डाला था। शरीर देखने के लिए जरूर मोटा था, लेकिन उसमें दम-खम ज्यादा न रह गई थी। जरा-सी हरकत करते तो हाँफने लगते, चार कदम चलते तो बेदम हो जाते। ३१ बरस की नन्हीं-उम्र में ही उन्हे बुढ़ापे ने धर दबाया था। उनमें न तो आन्तरिक शक्ति थी और न बाहरी दृढ़ता। शरीर पिलपिला हो गया था। हकीमों, डाक्टरों और खास तरह के इलाज करने वालों की फौज की-फौज उनके पीछे लगी रहती। दवा-इलाज हिकमत के जरिये उनकी जिन्दगी चल रही थी। हकीमो के कुश्तों और डाक्टरों

के इंजेक्शनों की कूवत पर नवाब साहब टगे हुये थे। पेटेन्ट दवाओं के बाक्स-के-बाक्स खाली होते रहते, जब जाकर कहीं नवाब साहब का वक्त सही-सलामती से गुजरता। तो भी उनके मुँह से न तो शराब छूटती थी और न बिना नई-नवेली नाजनियों के उन्हें एक क्षण कल ही पड़ती थी।

नवाब साहब १९४१ के अक्टूबर माह की २३ तारीख को अपने खास इलाज की मंशा से लाहौर तशरीफ लाये। उधर इलाज चल रहा था, इधर रंग-रेलियों का भी जोर था। संयोग से उनकी नजर शम्शादबाई नामक एक नई तवायफ पर जा पड़ी। उस वक्त इस बाई की बड़ी धूम थी। उसने उस समय तक सिर्फ पंद्रह बसन्तों की बहार भर देख पाई थी। लेकिन १५ बरस की यह अल्हड़ छोकरी अपने फन मे कमाल हासिल कर चुकी थी। मज़ाक करने में और हाजिर-जवाबी में तो वह अपना शानी न रखती थी। उसकी बातें सुन कर लोग दंग रह जाते। रूप-रंग भी उसका उस समय की प्रायः सभी लाहौरी अप्सराओं को मात दे रहा था। भला नवाब ऐसा हुस्न-परस्त इस मौके को कैसे हाथ से जाने देता!

हुस्न की परी शम्शादबाई नवाब साहब के सामने पेश की गई। उससे नवाब साहब इतने खुश हुए कि उन्होंने उसे अपने साथ एक रात रहने के लिए १७०० रुपये बख्श दिये। बाईजी की भी बाँहें खिल गईं। उन्होंने भी शायद इतनी भारी रकम के मिलने की उम्मीद तक न की थी। जैसे नवाब साहब शम्शाद के रूप पर लट्टू हो रहे थे, उसके बेजोड़ बोल को सुनते रहने के लिए बावले हो उठे थे, उसी तरह शम्शाद भी ऐसे फैयाज नवाब की खिदमत के लिए बेताब थी। ६ नवम्बर १९४१ को नवाब से शम्शाद को कुछ ही घंटे की हाजिरी के लिए इतनी बड़ी रकम मिली थी। नवाब साहब ने

उससे अपने साथ अपने गाँव खान-बहादुरगढ़ चलने की मंशा जाहिर की। वह फौरन उनकी खिदमत के लिए तैयार हो गई।

नवाब साहब दूसरे दिन शम्शादबाई तथा उसके भाई तालिब हुसैन को अपने साथ लेकर शाम की ट्रेन से अपने गाँव के लिए रवाना हो गये। आराम से पहले दर्जे मे सफर करते हुए वे लोग खानेवाल स्टेशन तक मजे मे ४ बजे सबेरे पहुँच गये। इस स्टेशन पर नवाब साहब की तबियत कुछ खराब मालूम होने लगी। कुछ सोच-विचार के बाद नवाब साहब ने तय किया कि बजाय मुलतान जिला वाले अपने गाँव खानबहादुरगढ़ जाने के, उनके खास मुकाम झंग जाना बेहतर होगा। नौकरों को तो कुछ कहना था ही नहीं, शम्शादबाई को भी कोई एतराज न हुआ। बस, फौरन गाड़ी बदली गई और नवाब साहब अपने लवाजमे के साथ करीब साढ़े ग्यारह बजे दिन मे झंग जा पहुँचे। यहाँ आने पर नवाब साहब ने देखा कि उनके खानदानी शाही महलों में उनका एक अजीज कब्जा जमाये पड़ा हुआ है। सयोग से इस मेहमान का नाम भी मोहम्मद नवाज था और नवाब साहब के बाद उसी को नवाब साहब की रियासत पर हक मिलने वाला था। नवाब साहब के एकाएक तशरीफ लाने पर इस मेहमान नवाज ने महलों को छोड़ कर एक तम्बू मे अपना डेरा डाला।

नवाब साहब से नवाज की कुछ अनबन-सी रहती थी। उसने अपने हक को जतलाने के लिए अनेक बार नवाब साहब को रियासत के हिस्सों को बेचने या गिरवी रखने से मना किया था। वह नवाब साहब के ऐशो-इशरत को और बेहद फैयाजी को अच्छा न समझता था, बल्कि हर तरह से उनके खर्च में कमी कराने की कोशिश में रहता था। उसने रियासत को कोर्ट आफ वार्ड्स के जिम्मे करा देने की कोशिश भी की थी। इन कारणों से

नवाब साहब उससे नाराज रहते थे। नवाज का भंग वाले महलों में रहना नवाब साहब का अच्छा न लगा।

नवाब साहब ने अपने महलों मे आकर महफिल जमाई। जोरा और खैरननामक भंग की दो मशहूर तवायफे भी गाने के लिए बुलाई गई। उनका गाना हुआ जरूर, पर शायद जमा नही। शम्शाद से गाने के लिए बहुत कहा गया, पर वह राजी न हुई। नवाब साहब को उसकी यह हरकत पसद न आई। लेकिन उन्होने उस पर उस वक्त कुछ ज्यादा खफगी जाहिर न की। वे उस वक्त शायद आपे मे थे भी नही। खानेवाल स्टेशन पर नवाब साहब की तबियत कुछ नासाज़ हुई थी। वही से वे गम-गलत करने के लिये ह्विस्की की बोतले खाली करने लगे थे। यहाँ भंग मे रात १० बजे के करीब वे कोइ पाँच बोतले चढ़ा चुके थे।

रात को दस बजे के बाद नवाब साहब ने शम्शाद के साथ ख्वाबगाह मे कदम रक्खा। और सब नौकरो, खिदमतगारो को रुखसत कर दिया गया। नवाब साहब शम्शाद के साथ पलंग पर जा लेटे। एक सेवक उनके पैर दबाने लगा। कुछ देर बाद उसे भी छुट्टी दे दी गई। शम्शाद का भाई तालिबहुसैन नौकरों के साथ जाकर सो गया। नवाबसाहब के सोने के कमरे में एक हल्का बल्ब जलता छोड़ दिया गया था। नवाब साहब रात भर अपने कमरे मे हल्की रोशनी रखने के आदी थे।

आधी रात के बाद नौकरों को रिवाल्वर के चलने की आवाज सुन पड़ी। इसके बाद ही मोहम्मद हुसैन नामक नौकर का नाम ले-लेकर पुकारा जाने लगा। दलसिह नामक नैपाली चौकीदार ने तथा खानसामा ने आकर मोहम्मद हुसैन को जगाया और बतलाया कि नवाब साहब उसे तलब कर रहे हैं। जल्दी-जल्दी तीनों नौकर नवाब के सोने वाले कमरे की तरफ लपके। इसी वक्त उन्हें फिर रिवाल्वर के चलने की आहट मिली। वे

लोग कमरे के अन्दर गये। नवाब साहब पलंग पर लेटे मिले। उनके साथ शम्शाद पड़ी थी। पर उसका तकिया खून से तर था। पलग के पास ही एक रिवाल्वर पड़ा हुआ था। जिस वक्त नौकरअन्दर पहुँचे उस वक्त नवाब साहब आँखे बन्द किये हुये लेटे मिले। नौकरों के आने पर नवाब साहब ने कहा कि मोहम्मद नवाज़ (मेहमान) को बुलाओ। नौकर दौड़ कर नवाज़ को बुला लाये।

नवाज़ आया ज़रूर पर कमरे के अन्दर उसने पैर न रक्खा, बाहर से ही उसने तलब किये जाने का सबब पूछा। जब उससे कहा गया कि शम्शाद बाई मर गई है, तब उसके होश उड़ गये। लेकिन वह फौरन दौड़ा गया और झग के मशहूर वकील मनोहरलाल को बुला लाया। मनोहर लाल आया ज़रूर, पर उसने भी कमरे के अन्दर पैर नहीं रक्खा। उसने भी कमरे के बाहर रह कर ही सारी बातें पूछी। फिर वह पुलिस सुपरिटेंडेंट तथा कमिश्नर आदि के पास गया। शायद कोशिश थी मामले को यों ही रफा-दफा करा देने की। पर जब उसकी उम्मीद ज्यादा न देख पड़ी तब, पुलिस मे बकायदा रिपोर्ट दर्ज करा दी गई।

नवाब साहब ने जो लिखित बयान दिया, उसमें उन्होंने यही बतलाया कि मैं निर्दोष हूं। मुझे मारने के लिये नवाज़ ने कोशिश की थी, क्यों कि मेरे मरने पर उसे रियासत पर कब्जा मिल जाता। पर गोली शम्शाद के लगी। मैं डर के मारे चुपचाप पलङ्ग पर लेटा रहा। मुझे यही हिदायत की गई थी कि चुप लेटे रहो, अगर हिलेडुले तो गोली मार दी जायेगी। पहले ही वार मे मैं बेहोश हो गया था। बाद में मनोहर लाल ने भी आकर मुझे चुपचाप पड़े रहने की सलाह दी मेरे कमरे का और कमरे से मिले हुये गुसुल खाने वगैरा के किवाड़ लगा दिए

गये थे, पर अन्दर से वे बन्द नहीं थे। बाहर से कोई भी दरवाजों को खोल कर अन्दर आ जा सकता था। जब नवाज मेरे हाथों से इस रियासत को न ले सका और न रियासत पर कोर्ट आफ वाडेस का इन्तजाम ही करने में कामयाब हुआ, तब उसने यह जाल रचा।

नवाब साहब की ओर से जो नामी-नामी वकील-बैरिस्टर पैरवी के लिये खड़े किये गये थे, उन्होंने बड़ी कोशिश की कि नवाब साहब बेदाग छूट जायें, पर उनकी कोशिश कारगर न हुई। जो सुबूत पेश हुए उनसे यह साफ जाहिर था कि नवाब साहब ने आधी रात के बाद किसी बात से नाराज होकर शम्शाद को रिवालवर से खत्म कर दिया। गोलियाँ दो बार चलाई गई थीं। यह भी माना गया कि शम्शाद ने खुद-कुशी नहीं की है। खुद कुशी का कोई निशान या सुबूत नहीं पाया गया। शम्शाद को किसी दूसरे ने ही गोली मारी थी। और नवाब साहब ही गोली मारने वाले माने जा सकते हैं।

नवाब साहब ने अपने बयान में बतलाया था कि उनका पक्का इरादा शम्शाद से शादी कर लेने का था। ऐसी हालत में वे खुद अपनी भावीबेगम को जान से कैसे मार सकते थे। शम्शाद के भाई ने बयान दिया था कि मेरी बहन को नवाब साहब से किसी तरह की शिकायत न थी, बल्कि एक बार की जरा-सी अदनी खिदमत के लिए जब उन्होंने १७०० रुपये बख्शे थे तभी से हम लोगों को उनसे बड़ी-बड़ी उम्मीदें होने लगीं थी, मेरी बहन उनके हुजूर में रहने के लिये अपनी खुशी से उनके साथ आई थी और उनके साथ रात दस बजे उनके पलङ्ग पर जाने के वक्त तक ऐसी कोई बात नहीं हुई थी, जिससे यह कयास किया जा सकता कि उस पर ऐसी चोट की जायेगी।

अदालत में खून करने के सबब या मंशा का सवाल उठा

था। वैसा कोई जाहिरा सबब खून करने का न देख पड़ा। यह कहा गया कि उस दिन जंग की दूसरी तवायफों के सामने शम्शाद ने गाने से इन्कार कर दिया था, इस लिये नवाब साहब उस पर बेतरह खफा हो गए थे और मौका मिलते ही उन्होंने उसे सजा दी। पर यह सबब वैसा पक्का साबित न हो सका। कोई भी शख्श इतनी जरा-सी हुक्म-उदूली के लिये इतनी भारी सजा न देगा। अन्त मे माना यह गया कि नौकरों के चले जाने के बाद कोई ऐसी बात जरूर हुई। जिससे नवाब साहब को आपे से बाहर कर दिया और ताव में आकर उन्होंने रिवालवर चला दिया। पर दो गोलियों के चलाये जाने से जरा मामला ज्यादा पेचीदा हो उठा था। धमकाने के लिये कोई रिवाल्वर दिखला सकता है और धोखे से एक बार गोली अनजाने में छूट सकती है, पर दूसरी बार गोली का चलना यह साबित करता है कि जानबूझ कर वार किया गया।

उस...की-सी शोख तवायफ भी नवाबों-रईसों की जीट न उड़ा सके।

पर अदालत के सामने यह सब कुछ भी न आया था। अदालत ने यह जरूर मान लिया था कि किसी खास सबब से, या शम्शाद की किसी खास बेजा-हरकत से नवाब साहब इतने उत्तेजित हो गये कि उन्होंने बिना सोचे-समझे ही उस पर रिवाल्वर छोड़ दिया।

असेसरों ने राय दी कि जो सुबूत पेश किये गए हैं, उनसे अपराध पूरी तौर पर साबित नहीं माना जा सकता। परन्तु अदालत ने असेसरों की राय को नहीं माना। अदालत ने फैसला सुनाया कि सुबूत जो पेश हुए हैं उनसे अभियुक्त पर अपराध करना साबित हो जाता है, इस कारण उसे काले पानी की सजा दी जाती है।

सजा तो सुना दी गई, पर नवाब साहब की हालत ठीक नहीं थी, इस सबब से वे जेल न भेजे गये। खास इन्तजाम के बाद वे इलाज के लिए म्यो अस्पताल में दाखिल करा दिये गए। यह ६ जून, सन १९४२ की बात है। फैसले के बाद ही हाईकोर्ट में अपील दायर की गई। लेकिन ७ जौलाई १९४२ को नवाब साहब का अस्पताल में इंतकाल हो गया। न तो हाइकोर्ट मे मामले की सुनवाई हो सकी और न खास-खास राज खुल सके।

सब से बड़ा रहस्य था नवाब साहब का शम्शाद बाई की लाश के साथ पूरे दस घन्टे तक लेटे रहना।